भारत विजय

(मौलिक नाटक)

पं० दशरथ ओझा एम० ए० (संस्कृत तथा हिन्दी)
अध्यापक, हिन्दू कालेज, दिल्ली यूनिवर्सिटी, दिल्ली ।

प्रकाशक:
साहित्य मन्दिर
बनारस

प्राप्तिस्थान—
सरकार ब्रादर्स
४, दरियागंज, दिल्ली ।

मूल्य ३)

प्रकाशक—

साहित्य मन्दिर

बनारस

मुद्रक—

एक्सलसियर प्रेस

नई सड़क, देहली

दो शब्द

हिन्दी साहित्य में मौलिक ऐतिहासिक नाटकों की संख्या इनी गिनी है। ऐतिहासिक नाटक का सफल लेखक केवल कल्पना संसार में ही रमण नहीं करता, उसमें वह असामान्य प्रतिभा भी विद्यमान रहती है जो इधर उधर बिखरे हुए तथ्यों के आधार पर अपनी कल्पना के सहारे किसी समय विशेष का जीर्णोद्धार कर सके; उसे हमारे सामने उस रूप में प्रदर्शित कर सके जैसा वह किसी समय रहा होगा। हमारे प्रख्यात नाटककार 'प्रसाद' में यह अद्भुत शक्ति वर्तमान थी और गुप्तकाल का अंशतः उन्होंने बहुत अच्छा चित्रण किया है। श्री दशरथ ओझा ने अपने 'अशोक', 'स्वतन्त्र भारत' और 'भारत विजय' द्वारा 'प्रसाद' के इस अपूर्ण महान् कार्य की सुन्दर पूर्ति की है।

'भारत विजय' में चन्द्रगुप्त प्रथम और समुद्रगुप्त पराक्रमादित्य के समय के भारत का अच्छा चित्रण है। धरणीबन्ध, संस्कृति-समन्वय और भारतीय संस्कृति की रक्षा—ये गुण समुद्रगुप्त की नीति के मुख्य पहलू थे। केवल कल्पना के आश्रय पर ही नहीं अपितु शिलालेखों, सिक्कों, और महामना श्री कालीप्रसाद जायसवाल आदि के इतिहास ग्रंथों के आधार पर नाटककार ने इन उद्देश्यों की पूर्ति का क्रम भली भांति प्रदर्शित किया है। शकों के उपद्रव को आपने समुचित महत्व दिया है। मेरी राय से भी यह समझना

भ्रान्तिमान है कि गुप्तकाल के आरम्भ में शक इतने शक्तिहीन हो चुके थे कि उनसे आर्यावर्त को कुछ भ्रम न रहा था। आर्यावर्त के राजाओं का समुद्रगुप्त द्वारा उन्मूलन, दक्षिण राजाओं का उत्खात्, प्रतिरोपण और शाही आदि का कन्योपनयन—ये सब इतिहास सम्मत घटनाएं हैं। उचित पात्रों के सृजन और इतस्ततः सामान्य परिवर्तन द्वारा नाटककार ने इन्हें सजीव कर दिया है। समुद्रगुप्त कालीन भारत के इस रोचक वर्णन और भव्य चित्रण के लिये लेखक महोदय अभिनन्दनीय हैं।

दशरथ शर्मा

५ जुलाई १९५० एम. ए., डी. लिट।

प्राक्कथन

गुप्तकाल भारतीय इतिहास में स्वर्ण युग माना जाता है। उस स्वर्ण युग को लाने का श्रेय जिन महापुरुषों को मिला है, उनमें सम्राट् समुद्रगुप्त प्रधान माना जाता है। तथ्य तो यह है कि शताब्दियों के बाद समस्त भारत को एकता के सूत्र में ग्रथित करने का कार्य समुद्र-गुप्त जैसे अचिन्त्य मानव के द्वारा ही सम्भव था। पांच वर्ष की अल्प अवधि में वक्षु नदी से कामरूप तक और काश्मीर से कुमारी अन्तरीप तक समस्त छोटे-छोटे राज्य एकछत्रच्छाया में किस प्रकार आ गए, इस प्रश्न को समझाने के लिए गुप्त काल से पूर्व का इतिहास देखना होगा।

शिला लेखों, मुद्राओं तथा अन्य साधनों द्वारा ऐतिहासिकों ने यह बात सिद्ध कर दी है कि मध्य भारत में नाग, वाकाटक और भार-शिव वंशी राजा अपनी तपस्या के बल से देश और समाज को राष्ट्रियता के उच्च स्तर की ओर ले जा रहे थे। भारतीय जनता विदेशियों के आक्रमणों से ऊब रही थी। देश छोटे २ राज्यों में बंट जाने के कारण पश्चिमोत्तर से होने वाले हमलों को रोकने में असमर्थ हो गया था। शक और कुशान भारतीयता को मिटा कर अपना साम्राज्य स्थायी बनाने की चिन्ता में थे। ब्राह्मणों को श्राद्ध-तर्पण आदि धार्मिक कृत्यों से रोका जा रहा था। जनता व्याकुल होकर त्राहि त्राहि पुकार रही थी। ऐसे दुर्दिन में भारशिवों और वाकाटकों ने तांडवकारी शिव की शरण ली। उन्होंने शिवभक्तों के समान तपोमय जीवन बिताना प्रारम्भ किया। युद्ध के द्वारा छोटे २ राज्यों को जीतकर एक बड़ा राज्य स्थापित किया।

धार्मिक क्षेत्र में भी क्रान्ति मच चुकी थी। भगवान् बुद्ध द्वारा प्रवाहित स्रोत पाखंडी भिक्षुणियों के अपवित्र जीवन के कारण अब दूषित बनता जा रहा था। जनता इससे सन्तुष्ट न थी। अहिंसा के नाम पर कायरता और धर्म के नाम पर भिक्षुओं की अकर्मण्यता कब तक क्षम्य मानी जाती? कितनी ही भिक्षु-भिक्षुणियाँ विलासी बन रही थीं। संघाराम धर्म केन्द्र के स्थान पर मधुशाला बन रहे थे। ऐसी परिस्थिति में परिवर्तन अवश्यम्भावी था।

× प्रसिद्ध इतिहासवेत्ता जायसवाल लिखते हैं—"बौद्ध धर्म उस समय राष्ट्रियता के उच्च स्तर से पतित हो चुका था, और उसने अहिन्दु स्वरूप धारण कर लिया था। कारण यह था कि बौद्धों ने कुशानों के साथ स्वार्थ सम्बन्ध स्थापित कर लिया था। कुशानों के हाथ में पड़कर बौद्ध धर्म ने अपनी आध्यात्मिक स्वतन्त्रता नष्ट कर दी थी और वह शत्रु की राजनीति में सहायक बन गया था।"

यह व्रात्यों और ब्रह्मण्यों के संघर्ष का काल था। बौद्ध भिक्षुओं ने अपनी रक्षा के लिए जनमत की उपेक्षा की और विदेशी आक्रमण-कारियों को निमंत्रित किया। इस पर देश झल्ला उठा। व्रात्य श्रद्धा के स्थान पर घृणा के पात्र बन गए। जनता ने भारशिवों और वाकाटकों का स्वागत किया। अतएव उनकी विजय होती गई। उत्तरापथ के छोटे छोटे कई राज्य मिल कर एक बन गए।

भारशिवों के सिक्कों और उनके वीरतापूर्ण नाम से यह सिद्ध हो गया कि शकों और कुशानों के राज्य का बहुत-सा भाग उनके अधिकार से छिन गया था। छोटे छोटे राजा विदेशियों से स्वतन्त्र होकर अपनी मुद्राएं निर्मित करने लगे थे। यह सब प्रभाव भारशिवों की शक्ति का ही था। कहा जाता है कि ये भारशिव योगियों के समान त्यागमय

× अन्धकार युगीन भारत

जीवन बिताते थे, यद्यपि इनका काम अत्यन्त महत्त्वपूर्ण युद्ध सम्बन्धी होता था।

जिस समय भारशिव शक कुशानों से युद्ध कर रहे थे, मगध में कोट कुलवाला सुन्दर वर्मा राज्य करता था। जायसवाल कहते हैं कि उसने चन्द्रगुप्त प्रथम को गोद लिया था, क्योंकि उसका कोई औरस पुत्र न था। गोद लेने के उपरान्त एक लड़का कल्याण वर्मन पैदा हुआ, जिसे सुन्दर वर्मा के स्वामि-भक्त सेवक मगध से दूर ले गए।

सुन्दर वर्मा का गोद लिया बालक चन्द्रगुप्त राजा हुआ और उसने लिच्छवी कुमारी, कुमार देवी से विवाह करके मगध पर अपनी प्रभुता जमा ली। कुछ लोग अनुमान करते हैं कि गुप्तों ने अपनी वंशावली इस कारण न दी क्योंकि वे किसी नीच कुल के थे, किन्तु यह तर्क अधिक न्यायसंगत नहीं जान पड़ता। इसके प्रतिकूल हम देखते हैं कि चन्द्रगुप्त द्वितीय का विवाह वाकाटकों की कन्या के साथ हुआ था। शैव वाकाटक अपनी कन्या किसी नीच कुल में ब्याह देंगे, यह बात भी बुद्धिगम्य नहीं जान पड़ती। कुछ लोगों का मत है कि चन्द्रगुप्त प्रथम प्रयाग के पास एक भूखंड का स्वामी था। महाराज सुन्दर वर्मा की सेना में उन्नति करते २ सेनापति हो गया। वह इतना तेजस्वी और राजभक्त था कि सुन्दर वर्मा ने जीवितावस्था में ही उसे शासन भार सौंप दिया था। स्वभावतः मृत्यु के उपरान्त चन्द्रगुप्त प्रथम ही शासक हुआ।

मेरा यह अनुमान है कि सुन्दर वर्मा की मृत्यु के उपरान्त महारानी अपने पितृ गृह चली गईं और कल्याण वर्मा का जन्म वहीं हुआ। जब कल्याण वर्मा वयस्क होने लगा तो उसके नाना ने उसे मगध राज दिलाने के लिए महाकान्तार और नाग राजाओं को अपने पक्ष में कर लिया होगा। कारण यह था कि चन्द्रगुप्त प्रथम का विवाह लिच्छवी वंश में हुआ था। लिच्छवी वंश व्रात्य था और

भारशिव ब्रह्मण्य । चन्द्रगुप्त व्रात्यों का पक्ष लेता था। इसका प्रमाण भी ऐतिहासिक देते हैं। भारशिव ब्राह्मण धर्म की स्थापना करने के लिए मगध पर अधिकार चाहते ही होंगे। इस कारण चन्द्रगुप्त का —महाकान्तारों द्वारा—बन्दी बनना असंगत नहीं प्रतीत होता।

भारशिवों का पक्ष भी प्रबल था। उनके मत में कल्याण वर्मा सुन्दर वर्मा का औरस पुत्र होने के कारण न्यायतः राज्य का अधिकारी था। इसलिए शबरों से लड़ते समय चन्द्रगुप्त प्रथम का बन्दी बना लिया जाना तर्कसंगत प्रतीत होता है।

सन् ३४० से ३४४ ई० तक मगध पर गुप्तों की राज्य-शृंखला टूटी हुई है। ऐसा प्रतीत होता है कि चार वर्ष गुप्तों को अपनी सत्ता स्थापित करने में व्यतीत करने पड़े। महाराज चन्द्रगुप्त विद्रोही शबरों से युद्ध करते समय पकड़ लिए गए और समुद्रगुप्त को उनकी रक्षा के लिए संग्राम करना पड़ा।

इस प्रकार कौशाम्बी के युद्ध के पश्चात् महाराज चन्द्रगुप्त प्रथम मुक्त हुये और उन्होंने अपने उल्लासपूर्ण कंपित करों से समुद्रगुप्त को राज करने की अनुमति प्रदान की और आशीर्वाद दिया।

समुद्रगुप्त कौशाम्बी के युद्ध के उपरान्त दक्षिणापथ में संग्राम करने जाता है। एरण का युद्ध भारतीय इतिहास की प्रसिद्ध घटना है। इस युद्ध में उदारनीति के बल से उत्तरापथ और दक्षिणापथ का संगम होता है। यहीं ककुत्स्थराज की कन्या दत्त देवी के साथ समुद्रगुप्त का विवाह होता है। इस विवाह के संबन्ध में ऐतिहासिकों में बहुत ही मतभेद है। ×पं० चन्द्रबली पाँडे ने इस सम्बन्ध में बड़ी खोज की है। मुझे उन्हीं का मत मान्य प्रतीत हुआ इस कारण मैंने भी

× विक्रम द्विसहस्राब्द अङ्क में पं० चन्द्रबली जी का लेख इस सम्बन्ध में प्रकाशित हुआ है।

दत्त देवी को कदम्ब कुल की ककुत्सराज-कन्या माना है।

गुप्त काल के सिक्कों में कच के नाम से कुछ सिक्के मिले हैं। इस कच के सम्बन्ध में परम मतभेद है। जायसवाल समुद्रगुप्त को ही कच मानते हैं, अन्य इतिहासकार कच को समुद्रगुप्त का छोटा भाई मानते हैं। समस्या यह है कि इन विभिन्न मतों में कौन मत मान्य समझा जाय? मेरा यह अनुमान है कि कच को महाराज समुद्रगुप्त स्वतः राज्याधिकार प्रदान कर कुशानों के साथ युद्ध में प्रवृत्त हुए। उस विजय के उपरान्त सम्राट् बनने पर समुद्रगुप्त के नाम से सिक्के बनने लगे किन्तु मध्यकाल के सिक्कों पर महाराज कच का ही नाम अंकित रहा। इस प्रकार इतिहास की घटनाओं का सामंजस्य हो जाता है।

इस नाटक के प्रायः सभी पात्र ऐतिहासिक व्यक्ति हैं। मैंने यही चेष्टा की है कि वास्तविक नाम मिल जायें। बहुत खोजने पर कुशान दैवपुत्र शाहानुशाही का नाम अमवेतस मिला। डा० राधाकुमुद मुकर्जी × ने अपने इतिहास में यही नाम दिया है। शकों के नाम इतिहास प्रसिद्ध हैं ही।

अहिच्छत्र राज महिषी का नाम न मिलने के कारण मैंने उसे उपाधि रूप में ही रहने दिया है। कल्याण वर्मन का विवाह मथुरा की राजकन्या से हुआ था, ऐसा ऐतिहासिक मानते है। मेरा अनुमान है कि अहिच्छत्रों ने मथुरा तक अपना राज्य स्थापित कर लिया था। इस प्रकार अहिच्छत्र कुल में कल्याण वर्मा का विवाह इतिहास से विरुद्ध नहीं हो सकता।

मालती का चरित्र मेरी अपनी कल्पना है। मालती को तत्कालीन वात्य-संस्कृति का प्रतीक समझना चाहिये। उसका विवाह वैष्णव धर्मावलम्बी समुद्रगुप्त के साथ कराया गया है। इसका तात्पर्य

× The History of Gupta Empire

यह है कि व्रात्य-संस्कृति वैष्णव धर्म में लय होकर एक बन गई। भारतीय धर्म के उस नूतन रूप का प्रचार भारतीय उपनिवेशों में हुआ। इस संस्कृति-समन्वय में महायान आचार्य वसुबन्धु और शिवोपासक शिवानन्द जी का प्रयास दिखाया गया है। इसका भाव यह है कि व्रात्य और ब्रह्मण्य आचार्यों की प्रतिभा और प्रयास से देश में वैष्णव धर्म—गीता धर्म—व्याप्त हो गया। संस्कृत राज भाषा बन गई और देश में नवजीवन आ गया।

इस नाटक को प्रस्तुत करने में जिन आदरणीय विद्वानों की सहायता मिली है, मैं उनका अत्यन्त आभारी हूं। हिन्दी साहित्य सम्मेलन के वर्तमान सभापति पं० चन्द्रबली पांडे ने कई दिनों तक अपना बहुमूल्य समय देकर नाटक को संशोधित किया। समुद्रगुप्त और मालती के चरित्र में जो कुछ नवीनता आई है वह डा० सुरेन्द्र नाथ शास्त्री का सुझाव है। उन्होंने संस्कृत नाट्यकला की कसौटी पर इसे कसा। यद्यपि वह पूर्ण रूप से इस नाटक से सन्तुष्ट नहीं है तथापि यह मानते हैं कि इसमें संस्कृत नाट् शास्त्र और हिन्दी की अर्वाचीन प्रणाली का अच्छा समन्वय हुआ है।

मैं डा० दशरथ शर्मा का अत्यन्त कृतज्ञ हूँ। इतिहास की उलझी हुई गुत्थियों को सुलझाने में उन्होंने बड़ी सहायता की। डा० साहब साहित्य और इतिहास दोनों के पण्डित हैं। अतएव उनका पथ-प्रदर्शन बहुत ही सहायक हुआ।

जिन ग्रन्थों के आधार पर कथा वस्तु तैयार की गई है, उनका उल्लेख अलग किया जा रहा है।

२६ जनवरी १९५०

—दशरथ ओझा

स्त्री पात्र

कुमार देवी	—	समुद्रगुप्त की माता
छोटी महारानी	—	कच की माता
दत्तदेवी	—	साम्राज्ञी
मालती	—	यौधेय राजकुमारी
राजमहिषी	—	यौधेयराज की महारानी
विद्या	—	चन्द्र वर्मा की माता
माधुरी	—	चन्द्र वर्मा की महारानी
अहिच्छत्र राजमहिषी	—	कल्याण वर्मा की श्वश्रू

[सखियाँ, दासियाँ इत्यादि]

पुरुष पात्र

चन्द्र गुप्त (प्रथम)	—	मगध के महाराजाधिराज
समुद्रगुप्त	—	सम्राट्
कच	—	सम्राट् का कनिष्ठ भ्राता
सुन्दर वर्मन	—	(कोटकुल)मगध का महाराज
चन्द्र वर्मा	—	मालव राज
कल्याण वर्मा	—	सुन्दर वर्मा का औरसपुत्र
रुद्रदाम (शकराज)	—	शक राज क्षत्रप
ग्रमवेतस	—	दैवपुत्र शाहानुशाही
अच्युत नन्दी	—	अहिच्छत्र नरेश
गणपति नाग	—	नाग राज
शिवानन्द	—	योगिराज
हरिषेण	—	कविराज
वसुबन्धु	—	बौद्ध धर्माचार्य
यौधेयराज	—	यौधेय के राजा
ककुत्सराज	—	कदम्ब कुल का राजा

[विदूषक, उत्तरापथ और दक्षिणापथ के राजा, गुप्तचर, दौवारिक, प्रतिहार, अमात्यगण, पुजारी इत्यादि]

प्रथम अंक

[प्रथम दृश्य]

[मथुरा के पूर्व एक विस्तृत भूभाग में यौधेयों का शिविरागार है। एक स्थल पर "महाराज महासेनापति" उत्कीर्ण है। चतुर्दिक् दूर दूर तक सैनिकों के शिविर बने हुए हैं। सैनिकगण प्रातः काल युद्ध की तैयारी में संलग्न है। कोई अस्त्र शस्त्र संभाल रहा है। कोई वर्म धारण कर रहा है। महाराज महासेनापति वीरसिंह के शिविर में कुछ मन्त्रणा हो रही है।

राजा समुद्रगुप्त अपने गुल्म के साथ सहसा पहुंच जाते हैं। सैनिकों को आज्ञा मिलती है कि अश्वों को विश्राम करने दिया जाय और सैनिक भी युद्ध भूमि में चलने के पूर्व दैनिक आवश्यकताओं से निवृत्त हो लें।

प्रतिहार राजा के सम्मुख आकर प्रणाम करता है।]

समुद्रगुप्त—क्या तुम प्रतिहार हो ?

प्रतिहार—हां राजन् ! आज्ञा। आपका परिचय ! क्या कार्य है ?

समुद्रगुप्त—(हंसते हुए) इतने प्रश्न एक साथ प्रतिहार !

प्रतिहार—राजन् ! आपका तेज......मैं...डर......क्षमा !

समुद्रगुप्त—क्या महाराज-महासेनापति शिविर में हैं ?

प्रतिहार—हैं राजन् ! हैं तो, पर अन्दर जाना मना...आपका नाम राजन् !

समुद्रगुप्त—महाराज महासेनापति को सूचना दो कि समुद्रगुप्त मिलना चाहते हैं।

प्रतिहार—आप राजा समुद्रगुप्त। क्या आप साकेत से पधारे! आपको महाराज नित्य जपते हैं!

[प्रतिहार अन्दर प्रविष्ट होता हैं। समुद्रगुप्त आवश्यक पत्रों को संभालते हैं। महाराज महासेनापति, सेनापति, रण भांडागारिक, कटुक, इत्यादि बाहर आकर समुद्रगुप्त का स्वागत करते हैं। महाराज महासेनापति का संकेत पाकर सब लोग भीतर जाते हैं।]

वीरसिंह—कहिए राजन्, आप कब पधारे?

समुद्रगुप्त—अभी घोड़े से अलग हुए हैं महासेनापति!

वीरसिंह—यात्रा कैसी रही? हम आपकी प्रतीक्षा अत्यन्त उत्कंठा के साथ कर रहे थे!

समुद्रगुप्त—आपका सन्देश पाते ही हमने गुल्म के साथ प्रस्थान किया। हमारे सैनिक अहर्निश भगे चले आ रहे हैं।

वीरसिंह—राजन्, आपको अत्यन्त कष्ट हुआ। साकेत है भी तो कितनी दूर! कहां साकेत और कहां मथुरा! भयंकर मार्ग!

समुद्रगुप्त—मार्ग में अहिच्छत्र-नरेश से भी मिलता आया हूं। उन्हें भी युद्ध में सम्मिलित होने की प्रेरणा करता आया हूं।

वीरसिंह—राजन्, आपकी बड़ी कृपा। आपने मेरे लिए इतना कष्ट...

समुद्रगुप्त—प्रश्न आपका और मेरा नहीं, मथुरा और साकेत का नहीं, समस्त आर्यावर्त्त का है। अस्तु! युद्ध की प्रगति पर तो प्रकाश डालिए! मार्ग में यत्रतत्र मुझे युद्ध का आंशिक विवरण मिलता रहा है, किन्तु वे समाचार कुछ संतोषजनक नहीं प्रतीत हुए। अब क्या स्थिति है?

महासेनापति—स्थिति गम्भीर है राजन्! किन्तु आपके आगमन

से हम अर्द्ध मृतकों में नवजीवन आ गया है !

समुद्रगुप्त—क्या शक क्षत्रप विजयी बनते जा रहे हैं ?

महासेनापति—राजन् ! मथुरा का दुर्ग जब से उन्होंने हस्तगत कर लिया है तब से स्थिति गम्भीर हो गई है।

समुद्रगुप्त—आप क्या कह रहे हैं महासेनापति ! क्या मथुरा का सुदृढ़ दुर्ग क्षत्रपों के हाथ में चला गया ! सौराष्ट्र से मथुरा तक उनका राज्य ? मुझे मार्ग में इस प्रकार का दुःसंवाद मिला, किन्तु विश्वास न हुआ। मथुरा जैसा सुदृढ़ दुर्ग...

सेनापति—राजन् ! हमारे योद्धाओं ने दुर्ग रक्षा का पूर्ण प्रयास किया, किन्तु दुर्भाग्यवश हाथ से जाता रहा !

समुद्रगुप्त—क्यों ? क्या यौधेय सैनिक क्षत्रपों से निर्बल हो गये ?

सेनापति—राजन् ! निर्बल तो नहीं है किन्तु एक घटना...

[सेनापति महासेनापति के मुख की ओर देखते हैं]

समुद्रगुप्त—वह घटना मुझे बताने योग्य नहीं है क्या ?

महासेनापति—राजन् ! सेनापति को भय है कि आपको अरुचिकर न प्रतीत हो ! व्रात्यों ने......

समुद्रगुप्त—व्रात्यों ने क्या किया ? सुनूं भी तो !

महासेनापति—व्रात्यों ने क्षत्रपों को दुर्ग के गुप्त मार्ग का निर्देश कर दिया। अतएव वे उस मार्ग से दुर्ग में प्रविष्ट हो गए, जहां हमने रक्षा का सबसे कम प्रबन्ध कर रखा था !

समुद्रगुप्त—महासेनापति। राजद्रोही ब्राह्मण और व्रात्य समान रूप से अक्षम्य है। व्रात्यों ने विद्रोह क्यों किया ? क्या आपके शासन प्रबन्ध से वे असन्तुष्ट हैं ? पर जाने दीजिये इन बातों

को! अतीत की त्रुटियों पर विवाद करना वर्त्तमान समस्या को गौण स्थान देना है। आज की स्थिति क्या है?

महासेनापति—राजन्, आज की स्थिति यह है कि सन्धि की चर्चा चल रही है। हम अपने सन्धिमहाविग्रहिक की प्रतीक्षा कर रहे हैं।

समुद्रगुप्त—क्षत्रपों ने सन्धि की क्या शर्तें रक्खी हैं?

महासेनापति—मथुरा का पश्चिमी भाग वह अपने राज्य में मिलाना चाहते हैं। इसके अतिरिक्त एक अत्यन्त दुःखद शर्त है!

समुद्रगुप्त—वह क्या?

महासेनापति—मैं क्या कहूं राजन्! [नेत्रों में जल आ जाता है]

समुद्रगुप्त—यह क्या! जो यौधेय वीर शत्रुओं के शरीर से रक्त की धारा बहाता था, वह आज अश्रुधारा स्वतः बहा रहा है!

महासेनापति—राजन, महाक्षत्रप मेरी पुत्री से विवाह का दुराग्रह कर रहा है। मैं अपने कुल में ऐसा कलंक! [नेत्रों से अश्रु बहने लगता है] रनिवास के चतुर्दिक् क्षत्रपों का पहरा है। शक सैनिक विजय-मद में सुरा का पान करके उन्मत्त हो रहे हैं।

समुद्रगुप्त—महासेनापति! यह कायरता कैसी! साहस करिए।

महासेनापति—हमारे समस्त प्रसिद्ध योद्धा धराशायी हो चुके हैं राजन्! किस बल पर साहस करता! किन्तु अब आपको देखकर धैर्य हो रहा है!

[प्रतिहार का प्रवेश]

प्रतिहार—[मस्तक नत करके] सन्धिमहाविग्रहिक द्वार पर खड़े

हैं। उनके साथ क्षत्रप की सेना भी है ।

महासेनापति—उन्हें प्रविष्ट होने दो !

[सन्धि महाविग्रहिक के साथ क्षत्रप सेनापति अपने कतिपय वीरों के साथ प्रविष्ट होता है। कुछ सैनिकों ने शिविर को चारों ओर से घेर लिया है। क्षत्रपों का विशाल काय और गौर वर्ण है । हाथों में तोमर, शक्ति, अंकुश, परशु, नाराच आदि अस्त्र शस्त्र चमक रहे हैं। वे वर्म पहने हैं। समुद्रगुप्त इस हलचल में बाहर आता है]

क्षत्रप सेनापति—[महासन्धिविग्रहिक की ओर देखते हुए] देखो तुम अपने राजा को समझा दो कि मथुरा के पूर्व का दस कोस का भूभाग हमें दे दे। जितना हमने जीत लिया है वह तो है ही। आगे दस कोस तक हमारा अधिकार रहेगा !

महा सन्धिविग्रहिक—[क्षत्रप सेनापति की ओर देखकर] दस कोस अधिक भूमि का प्रसंग तो इससे पूर्व नहीं छिड़ा था सेनापति !

क्षत्रप—(तमक कर) क्या बोलते हो ! इससे पूर्व नहीं छिड़ा तो क्या हुआ। अब तो छिड़ा है।

दूसरा क्षत्रप सेनापति—[क्रोध के साथ अस्त्र शस्त्र की झंकार करते हुए] क्या छिड़ा छिड़ा बोलते हो ! हमारी सारी शर्तें माननी होंगी समझा !

प्रथम क्षत्रप सेनापति—हमने तुमपर दया करके दस कोस भूमि मांगा है। हम चाहते तो तुम्हारा सारा राज्य छीन लेते ! समझा ! दस कोस इसलिए मांगते हैं कि तुम सब कहीं हमारे राज में रात को घुस न सको !

महा सन्धिविग्रहिक—सन्धि के उपरान्त हम कदापि आपके राज्य

में प्रवेश नहीं करेंगे। आपको इसका विश्वास दिलाते हैं।

प्र० क्षत्रप सेनापति—हम शत्रु का विश्वास कुछ नहीं करते। तुम्हें मानना पड़ेगा!

दू० क्षत्रप सेनापति—[अस्त्र शस्त्र की झनझनाहट करता हुआ] चुप रह। ज्यादा न बोल! बोल क्षत्रप महाराज की शर्तें मानता है या नहीं। नहीं मानता तो देख। [परशु को सामने करके] अभी तुम सबके प्राण लेंगे। समझा!

प्र० क्षत्रप सेनापति—[महा सन्धिविग्रहिक की ओर तरेरते हुए] दूसरी शर्त है कि कोष का सारा धन हमारा होगा!

महा सन्धिविग्रहिक—क्षत्रप सेनापति कल सन्ध्या समय तो केवल एक सहस्त्र दीवार ही आप मांग रहे थे। आज कोष का सारा धन लेना चाहते हैं। ऐसी दशा में हमारा राज-प्रबन्ध कैसे चलेगा ?

दू० क्षत्रप सेनापति—[मुंह चिढ़ाते हुए] तुम्हारा राज कहाँ है कि प्रबन्ध चलेगा। चुप रह। पागल कहीं का! हमारे क्षत्रप महाराज की सारी बातें माननी होंगी। समझा!

महा सन्धिविग्रहिक—(खिन्न मना होकर) क्षत्रप सेनापति, आप अपने विचार बदलते जाते हैं। शर्तें नई लगाते जा रहे हैं। यह तो सन्धि नहीं हुई। पराजय से भी बुरी हमारी स्थिति हो जाएगी।

दू० क्षत्रप सेनापति—क्यों सन्धि चाहते हो ? तुम्हारी पराजय नहीं तो और क्या हुई ? हम दया करके तुम्हें जीता रहने देते हैं। यह क्या कम है ? (परशु सामने करता हुआ) बोलो, अगर नहीं मानते तो तुम सबको अभी खंड २ कर देंगे।

पहला क्षत्रप सेनापति—हमारी तीसरी शर्त सुनलो। अच्छी

तरह सुनलो !

दू० क्षत्रप सेनापति—सुनता है कि नहीं ? कान खोलकर सुनले !

प्र० क्षत्रप सेनापति—अपनी बेटी को आज सन्ध्या से पूर्व अपने साथ लेकर हमारे महाराज के विलास भवन में पहुँचना होगा !

दू० क्षत्रप सेनापति—(हथियारों को झंकृत करते हुए महा सेनापति के पास जाकर) राजा, सुनता है या नहीं ? हमारे महाराज ने तुम पर दया की है । आज संध्या तक तुम्हारी बेटी तुम्हारे पास रहेगी । सूर्य अस्त से पूर्व उसे महाराज के विलास घर में पहुँचाना होगा, समझा !

तीसरा क्षत्रप सेनापति—(महासेनापति के निकट पहुंचकर) बोल, सारी शर्तें मंजूर हैं कि नहीं ?

प्रथम क्षत्रप सेनापति—(महा सन्धिविग्रहिक की ओर वक्र दृष्टि से देखते हुए) देखो, यदि आज शाम तक ये शर्तें पूरी नहीं हुईं तो—

दू० क्षत्रप सेनापति—तो सारे राज में आग लगा देंगे ।

तीसरा क्षत्रप सेनापति—सारे गांव जला देंगे । तुम सबकी बोटी २ काट देंगे । तुम्हारी बेटी के साथ साथ और स्त्रियों को अपने राज्य में पकड़ ले जायेंगे !

चौ० क्षत्रप सेनापति—और तुम सब को परशु से काटकर अंकुश की नोक पर नचायेंगे ।

[शक सैनिक मद्यप की भांति अट्टहास करते हैं]

प्र० क्षत्रप सेनापति—(मद्यशाला की ओर संकेत करके) सेनापति, इस राजा को भी वाल्हीक सुरा का स्वाद चखाओ !

[शक परिचारक चषकों में आसव भर २ कर पिलाते हैं । बाहर

सैनिक भी मदिरा पान कर रहे हैं। अट्टहास हो रहा है]

प्र० क्षत्रप सेनापति--राजन्, सुना है तुम्हारे देश में नर्तकियां बहुत अच्छा नाचती हैं। हम नाच देखना चाहते हैं। आज कई महीने के बाद युद्ध से अवकाश मिला है !

दू० क्षत्रप सेनापति—(अस्त्र शस्त्र झंकृत करते हुए) राजा जल्दी करो। जब तक हमारा चषक चलता है, तब तक नाचने वालियों को बुला लो।

[राजा समुद्रगुप्त के संकेत से अस्त्र शस्त्र सुसज्जित नर्तकियों का शिविरों में प्रवेश।)

एक नर्तकी—(हाव भाव से प्रथम क्षत्रप सेनापति की ओर जाकर) पहले आप नृत्य देखना चाहते हैं या संगीत सुनना।

प्र० क्षत्रप सेनापति—पहले एक गाना नाओ।

गान

जहाँ हो अबला का अपमान !

दिखाये नर कितना आयास, नहीं हो विष्णु-प्रिया का वास,
तुरत करती वाणी प्रस्थान,
जहाँ हो अबला का अपमान !

बने जब नारी कातर दीन, सगे सम्बन्धी पौरुष हीन,
होता दुर्गा का आह्वान,
जहाँ हो अबला का अपमान !

जहाँ पाशवता का हो नाच, मनुज बन जाए दनुज पिशाच,
काली का तोमर-संधान,
जहाँ हो अबला का अपमान !

प्र० क्षत्रप सेनापति—अच्छा बस, अब तुम नाच दिखाओ।

नर्तकी—एक नर्तकी का नाच देखिएगा या कई का।

प्र० क्षत्रप सेनापति—अच्छा तुम सब नाचो!

[नर्तन समाप्त होने पर शक सैनिक उन्हें समीप बुलाना चाहते थे। उन्होंने तांडव नृत्य के बहाने तीनों सेनापतियों के हथियार ले लिये थे। बाहर कोलाहल सुनकर नर्तकियों ने सेनापतियों को आहत कर दिया]

क्षत्रप सेनापति—शक सैनिको! बचाओ! धोखा! धोखा! अरे कोई नहीं बोलता!

(समुद्रगुप्त का प्रवेश)

समुद्रगुप्त—क्षत्रप सेनापति! आपके मृतक सैनिकों में बोलने की शक्ति कहां? (नर्तकियों की ओर संकेत करके) ठहरो! इन म्लेच्छों को अभी पापबुद्धि का फल भोगना शेष है। मत मारो।

क्षत्रप सेनापति—बचाइये महाराज! बचाइये! हम आपकी शरण में हैं! रक्षा कीजिए! हमें मत मारिए!

समुद्रगुप्त—अब तुम अभय हो क्षत्रप। भारतीय शरणागत की रक्षा करना अपना धर्म समझते हैं। (सैनिकों की ओर संकेत करके) यौधेय और मागध वीरो, इन्हें बन्दी बना लो!

(मगध सैनिक क्षत्रप महाराज भद्रदाम को बन्दी के रूप में ले जाते हैं।)

समुद्रगुप्त—क्षत्रप महाराज भद्रदाम, मैं तो समझता था कि आर्यावर्त्त की पवित्र भूमि में शताब्दियों तक रहने से शक महाराज सुसंस्कृत हो गए हैं, यहां की परम्परा उनके स्नायुओं

में व्याप्त हो गई होगी। किन्तु आज मैंने आप लोगों को नितान्त विपरीत पाया !

भद्रदास—राजन्, आप उदार हैं। आपने हमारे प्राण बचाए। हम आपका उपकार सदा याद रक्खेंगे। हमें क्षमा कीजिए !

[राजकुमारी अपनी सखियों के साथ प्रसन्नमना प्रविष्ट होती है]

समुद्रगुप्त—क्षत्रप, इन अबलाओं ने आपका क्या अनिष्ट किया था ? इनके साथ इतनी निष्ठुरता ! क्षमा मांगिए इनसे क्षत्रप नरेश !

राजकुमारी—(यौधेय राजा के चरणों के पास बैठकर अश्रुपात करती हुई) पिता जी !

यौधेयराज—बेटी चुप रहो ! तुम्हारी क्या दशा !

राजकुमारी—मैं तो समझती थी कि आपके चरणों का दर्शन कभी न होगा। (समुद्रगुप्त की ओर देखती हुई)

रानी—आज भगवान ने साक्षात् अवतार लेकर हमारी रक्षा की है। राजन्, हम आपके परम ऋणी हैं।

समुद्रगुप्त—माताजी, आप क्या कह रही हैं ! जो कुछ होता है भगवान शङ्कर की प्रेरणा से होता है। मैंने क्या किया ?

रानी—हमारा सतीत्व आज सङ्कट में था राजन् ! हम निस्सहाय स्त्रियां पापपिष्टों की वासना तृप्ति का साधन बनाई जाने वाली थीं। आपने…

समुद्रगुप्त—महारानी, जो व्यक्ति या समाज स्त्री जाति का निरादर करने की इच्छा भी रखता है, वह शीघ्र ही मिट जाता है। जो नारी को सन्ताप पहुँचाना चाहता है वह महान् सन्ताप पाता है। किसी भी संस्कृत समाज की कसौटी

नारी है।

भद्रदाम—क्षमा करिए राजन्। हमें आज विजय के उन्माद पर पराजय से भी अधिक वेदना हो रही है।

क्षत्रप सेनापति—क्षमा राजन्, हमसे भूल हो गई!

समुद्रगुप्त—बस इतने में ही व्याकुल हो गये क्षत्रप महाराज! विजय के उन्माद में आप इतने निष्ठुर क्यों बन गये? क्या आपकी यही नीति है कि निर्बल प्रतिद्वन्द्वी को पीस डालें और बलवान को देखकर पैरों पर सिर रख दें?

भद्रदाम—क्षमा करिये महाराज! आज भारतीय नीति का प्रत्यक्ष प्रमाण मिला। आपकी नीति बड़ी ही उदात्त है!

समुद्रगुप्त—उदात्त हो या न हो, पर भारतीय शासन में "न खरो नच भूयसा मृदुः" वाली नीति का पालन करते हैं।

क्षत्रप सेनापति—अब हमें मुक्त कीजिये महाराज। हम आपके सदा अनुगृहीत रहेंगे।

समुद्रगुप्त—सेनापति क्षत्रप। क्षमा करने और न करने का अधिकार न तो मुझे और न यौधेय राज को है, अपितु राजकुमारी को है। आप इससे क्षमा की याचना कीजिये।

क्षत्रप सैनिक—(राजकुमारी के पास जाकर) देवी, क्षमा कीजिए! आज से क्षत्रप भारतीयता के पुजारी रहेंगे।

राजकुमारी—(समुद्रगुप्त की ओर देखती हुई) हम शरणागत की रक्षा करते हैं क्षत्रप! आपको सद्बुद्धि मिले, जिससे भविष्य में स्त्री जाति का अपमान न हो!

समुद्रगुप्त—(सैनिकों की ओर देखते हुए) वीर योद्धाओ, इन्हें मुक्त करो, और सादर शिविर में ले जाकर इनके लिए सुख-साधन

सम्पन्न करो। अब ये लोग हमारे अतिथि हैं।

यौधेयराज—राजन्, आप इन्हें मुक्त कर रहे हैं। ये लोग फिर धोखा देंगे। ये महान् आततायी हैं।

समुद्रगुप्त—होगा वही जो आपकी इच्छा होगी। हम आपके राज्य में हैं, किन्तु भारतीय सभ्यता हमें अतिथियों का आदर करना सिखाती है और आततायियों का वध! इस समय ये क्षत्रप आततायी का रूप त्याग कर अतिथि बन गए हैं। जब आततायी बनेंगे तब हमारे अस्त्र-शस्त्र इनके अत्याचारों का उत्तर दे देंगे।

यौधेयराज—जो आपकी इच्छा हो!

[क्षत्रप महाराज तथा अन्य सैनिकों से लौह शृङ्खला हटा ली जाती है। सैनिक सबको निरस्त्र करके शिविर में ले जाते हैं।]

प्रथम अंक

द्वितीय दृश्य

[पाटली पुत्र का विशाल राज भवन है। द्वार पर महाप्रतिहार अस्त्र शस्त्र से सुसज्जित खड़ा है। उसके निरीक्षण में अन्य प्रतिहार अपने २ स्थान पर खड़े हैं। उद्यान के मध्य में महामात्य का भव्य भवन है। वहां मंत्रणाभवन में मंत्रि मंडल परामर्श कर रहा है। महामात्य वृद्ध हैं, एक उपधान के सहारे तिरछे लेटे विचार मुद्रा में तल्लीन हैं। सम्मुख कुछ पत्रवाहक खड़े हैं। महा सन्धिविग्रहिक का प्रवेश होता है।)

प्रतिहार—महा सन्धिविग्रहिक महोदय पधारे हैं।

महामात्य—(नेत्र ऊपर करते हुए) प्रविष्ट होने दो !

(महा सन्धिविग्रहिक, दण्ड पाशाधिकरण, महावलाधिकृत, महा सर्व दंड नायक, विनय स्थिति स्थापक का प्रवेश होता है। वृद्ध महामात्य स्वागत को उठना चाहते हैं। महासन्धि विग्रहिक समीप बैठकर उठने नहीं देते।)

महामात्य—महासन्धि विग्रहिक जी, कोई नवीन समाचार तो नहीं।

महा सन्धिविग्रहिक—देव, समाचार में नवीनता न हो तो जीवन भार स्वरूप हो जाय। नूतनता तो उन्नतिशील जीवन का चिन्ह है।

महामात्य—राज्य की अन्तर्राष्ट्रीय स्थिति में क्या नवीनता आई है ?

महा सन्धिविग्रहिक—अन्तर्राष्ट्रीय स्थिति में कलह की सम्भावना है देव !

महामात्य—वह कैसे ?

महा सन्धिविग्रहिक—महाराजाधिराज की अनुपस्थिति में पाटलीपुत्र में संघर्ष अवश्यम्भावी बनता जा रहा है।

महामात्य—वह कैसे ?

महा सन्धिविग्रहिक—अटवी प्रदेश में महाराजाधिराज घेर लिए गए हैं। वाकाटक और महाकान्तार ने मगधाधिपति बनाने के लिए सुन्दर वर्मा के किसी सम्बन्धी कल्याण वर्मन का अनुसन्धान किया है। साकेत और कामरूप में युवराज पद के लिए संघर्ष होने की सम्भावना है। कुमार समुद्रगुप्त शकों के आक्रमण में ऐसे व्यस्त हैं कि युद्ध की सूचना भी नहीं भेजते। इस प्रकार राज्य स्थिति भयावह बनती जा रही है। आज गुप्तचर द्वारा विशेष समाचार मिलने की आशा है !

महामात्य—(दीर्घ निःश्वास लेते हुए) महादंडपाशिक !

महादंड पाशिक—देव !

महामात्य—प्रजा में शान्ति की क्या दशा है ?

महादण्डनायक—देव ! गत सप्ताहों में व्रात्यों और ब्रह्मण्यों के कलह की सूचना निरन्तर मिलती रही है !

महाप्रतीहार—महागुप्तचर द्वार पर खड़े हैं देव !

महामात्य—प्रविष्ट होने दो !

महाप्रतिहार—जो आज्ञा देव !

(महाप्रतिहार बाहर जाता है और महागुप्तचर प्रविष्ट होते हैं।)

महागुप्तचर—(प्रणाम करते हुए) देव, ये गुप्त पत्र मेरे गुप्तचरों द्वारा प्राप्त हुए हैं !

महामात्य—महागुप्तचर ! आपको फिर बुलाया जायगा !

(महागुप्तचर बाहर जाता है। महामात्य पत्रों को पढ़कर रख देते हैं।)

महामात्य—महा सन्धिविग्रहिक की आशंका सत्य है। वाकाटक और अहिच्छत्र परस्पर सन्धि करके कुमार समुद्रगुप्त का विरोध करना चाहते हैं। मगध राज्य में कलहाग्नि प्रज्जवलित करने का षड्यन्त्र चल रहा है। सम्भवतः छोटी रानीकी दुरभिसन्धि से यह कुचक्र चलने वाला है।

(महावलाधिकृत की ओर दृष्टि डालते हुए) महावलाधिकृत, इस सम्बन्ध में आपकी क्या सम्मति है? राज्य की रक्षा किस प्रकार सम्भव है?

महावलाधिकृत—देव, आपका आशीर्वाद चाहिए। हमारी सैन्य शक्ति अहिच्छत्र तथा वाकाटकों की संयुक्त शक्ति को दमन करने के लिए पर्याप्त है।

महामात्य—किसी युक्ति से महाराजाधिराज को आटविकों से मुक्त करना चाहिए। महा सन्धिविग्रहिक, क्या आपने कोई योजना बनाई?

महा सन्धिविग्रहिक—देव, केवल दमन द्वारा किसी शक्ति का विनाश कदाचित् ही होता है। दमन की शक्ति होते हुए उसका उपयोग किया बिना, नीति द्वारा कार्य करना, कदाचित् अधिक उपयोगी हो।

महामात्य—वह कैसे?

महा सन्धिविग्रहिक—वाकाटकों से सन्धि द्वारा हम—अपनी सैन्य शक्ति का बिना ह्रास किये ही—इस समय कृत कार्य हो सकते हैं।

महामात्य—यह युक्ति तो बुद्धि संगत प्रतीत होती है। किन्तु वाकाटकों से सन्धि का अर्थ लिच्छवियों से वैर!

महा सन्धिविग्रहिक—देव, वह किस प्रकार ?

महामात्य—आज मगध और बाकाटकों के युद्ध का प्रश्न नहीं है, प्रश्न है ब्रात्यों और ब्रह्मण्यों का है।

महादण्डपाशिक—देव, मैं इसका कारण समझने में अबतक असमर्थ रहा कि राज्य में इस प्रकार के कलह के समाचार क्यों आ रहे हैं ?

महामात्य—आप महानुभावों को समझ लेना चाहिये कि कच और कल्याण वर्मा ब्रह्मराय वर्ग के द्वारा मनोनीत किए जा रहे हैं। और इसमें भाराशिवों, बाकाटकों तथा आन्ध्रों का सहयोग है। लिच्छवी दौहित्र समुद्रगुप्त के सहायक ब्रात्य हैं। हमें अत्यन्त सावधानी से कार्य करना है। क्यों महा सन्धि-विग्रहिक आपकी क्या सम्मति है ?

महा सन्धिविग्रहिक—देव, आज दो वर्ग स्पष्ट प्रतीत होते हैं–साकेत और वैशाली एक पक्ष का समर्थक हैं और दूसरे का है अहिच्छत्र और वाकाटक। मगध की नीति क्या हो, यही विचारणीय विषय है। महाराजाधिराज की अनुपस्थिति में कुछ निर्णय करना और भी कठिन है। सुना है कि कच तथा छोटी रानी के प्रति उनका अधिक आकर्षण है। ऐसी दशा में परिषद् क्या निणय कर सकता है !

महामात्य—महाबलाधिकृत, आपकी क्या सम्मति है ?

महाबलाधिकृत—देव, राजपूत तो युद्ध करना जानता है। मेरे विचार से तो कल्याण वर्मा का अनुसन्धान बाकाटकों की राज्य लिप्सा का द्योतक है। जब महाराज श्रीगुप्त के वंशज पैंतीस वर्षों से सिंहासनासीन है तो सुन्दर वर्मा के वंशज को विस्मृति के अन्धकार से वैभव के प्रकाश में लाना कहां की

बुद्धिमत्ता है। पर देव ! यह कल्याण वर्मा है कौन ?

महामात्य—लोक में यह कथा प्रचारित की जा रही है कि दिवंगत सुन्दर वर्मा ने सन्तानरहित होने के कारण अपने सेनापति श्री गुप्त को राज्याधिकार सौंप दिया था। सुन्दर वर्मा की राजमहिषी जब गर्भवती हुई तो श्री गुप्त ने युक्ति पूर्वक महाराज का वध करवाकर राजमहिषी को देश निर्वासित कर दिया। राज महिषी के पितृकुल वालों ने उसकी रक्षा की और नवजात शिशु को पाला। अब वही शिशु वयस्क हो गया है, अतएव उसे मगध नरेश बनाने का कुचक्र चल रहा है।

महाबलाधिकृत—देव, इस कलह में व्रात्य और ब्रह्मण्य का प्रश्न क्यों संयुक्त किया जा रहा है ?

महामात्य—समुद्रगुप्त को व्रात्य इसलिए बताया जाता है कि वह व्रात्यों के केन्द्र वैशाली का दौहित्र है। व्रात्यों के सहयोग से शक और कुशान आदि विदेशियों ने आर्यावर्त पर आक्रमण किया। इस कारण देश व्रात्यों से सशंक रहता है। समुद्रगुप्त को व्रात्य बनाकर उसके प्रति घृणा की भावना जागृत करना भारशिवों की कूटनीति है।

विनयस्थितिस्थापक—इतना ही नहीं देव। आज सद्धर्म पालक भिक्षु अष्टांग योग को विस्मृत कर रहे हैं और काम तृष्णा, भव तृष्णा तथा विभव तृष्णा के वशीभूत हो रहे हैं। भिक्षु वर्ग सुगति तथा निर्वाण शिक्षा को त्याग रहा है और काम शिक्षा को ग्रहण कर रहा है। पूछिये दण्डनायक से, उन्हें ऐसे कामातुर भिक्षुओं से काम पड़ता होगा !

महादंडनायक—देव विनयस्थितिस्थापक महोदय से पूर्ण रीति से सहमत हूं। अद्यापि इस सम्बन्ध में हमारे महाराजा-

धिराज की नीति अस्थिर रही है, किन्तु समय आ गया है कि एक निश्चित सिद्धान्त बनाना होगा। अन्यथा मगध व्रात्य और ब्रह्मण्य दोनों वर्गों से सहानुभूति खो बैठेगा !

महामात्य—यह गम्भीर प्रश्न है। महाराजाधिराज की अनुपस्थिति में हमें सहसा ऐसी नीति नहीं बनानी चाहिये जो राज्य के लिए भयावह हो। इस समय अटवी प्रदेश से महाराजाधिराज को बचा लेने की समस्या उपस्थित है। उसके लिए क्या करना चाहिये। मेरी समझ से सेना का एक गुल्म सहायतार्थ भेज देना चाहिये और महासन्धि विग्रहिक भी नीति द्वारा शत्रुओं को पराजित करने का उद्योग करें !

अमात्य वर्ग—(एक साथ) यही उचित प्रतीत होता है देव !

महामात्य—आज का कार्य समाप्त होता है।

(अमात्यगण एक २ करके मंत्रणा भवन से बाहर जाते हैं। महामात्य अलिन्द में टहलने लगते हैं। प्रतिहार नत मस्तक होकर निवेदन करता है)

प्रतिहार—देव संघो और स्थविरों से भिक्षुगण आए हैं। कहते हैं कि आपने आज उन्हें मिलने का समय दिया था !

महामात्य—उन्हें आदर पूर्वक यहां ले आओ।

[प्रतिहार बाहर जाता है]

(भिक्षुओं का प्रवेश। महामात्य तथा भिक्षुगण एक दूसरे को अभिवादन करते हैं !)

महामात्य—भन्ते कहिए। आप लोगों ने किस प्रयोजन से आने का कष्ट किया ?

भिक्षु—देव, क्षमा कीजिएगा। हमने कई बार विनयस्थिति

स्थापक से अपनी कठिनाइयों का वर्णन किया, किन्तु उन्होंने कोई भी संतोषजनक उत्तर नहीं दिया। इसी कारण आपकी सेवा में उपस्थित हुए हैं।

महामात्य—कहिये, क्या कठिनाई है ? राज्य की ओर से आपको आर्थिक सहायता नियमित रूप से मिलती तो है न ?

भिक्षु—हां देव ! आर्थिक सहायता तो मिलती है, परन्तु धर्म पालकों को अर्थ की उतनी अपेक्षा नहीं जितनी धर्म की !

महामात्य—आपके धर्मपालन में बाधक होने की सामर्थ्य किसमें है भन्ते !

भिक्षु—देव ! राजकर्मचारी कुछ दिनों से अपनी नीति बदल रहे हैं। वे लोग संघ के कार्यों में अनावश्यक हस्तक्षेप करते हैं। भिक्षुओं के पीछे गुप्तचर रखते हैं। जनता में व्रात्य-धर्म के प्रति अरुचि उत्पन्न करते हैं। परिणाम यह होता है कि जिन संघारामों को धर्मद्रोही पुष्यमित्र तथा भारशिव भी नष्ट न कर सके थे वे संघाराम और स्थविर निर्जन बनते जा रहे हैं।

महामात्य—भन्ते ! संघाराम और स्थविर निर्जन क्यों बनते जा रहे हैं ?

भिक्षु—देव, कारण स्पष्ट है। अधिकारियों के कोपभाजन बनकर भी धर्मपालन की शक्ति कतिपय दृढ़मति सद्धर्म पालकों में होती है। साधारणतः भिक्षु भिक्षुणियां संघारामों तथा स्थविरों को त्याग कर गृहस्थ बनती जा रही हैं। इस प्रकार सद्धर्म पालकों की संख्या क्षीण होती जा रही है ! देव, राज्य की ओर से कोई नीति स्पष्ट हो जानी चाहिये ! क्या हम प्रजा नहीं हैं ?

महामात्य—भन्ते ! महाराजाधिराज की अनुपस्थिति में हम नीति परिवर्तन में असमर्थ हैं। किन्तु यह बात तो स्पष्ट है कि मगध राज्य की प्रजा को सद्धर्म पालन करने में उस समय तक पूर्ण स्वतन्त्रता है, जब तक समाज हित में कोई बाधा न पड़े।

भिक्षु—हम भी यह चाहते हैं देव !

महामात्य—आप अपनी कठिनाइयों को निवेदन पत्र के रूप में स्पष्ट लिख कर दे दें। हम उस पर विचार करेंगे।

भिक्षु—जो आज्ञा देव !

(भिक्षु महामात्य एक दूसरे को अभिवादन करते हैं। भिक्षु गण प्रस्थान करते हैं। प्रतिहार प्रविष्ट होता है।)

महामात्य—इतना कोलाहल क्यों ?

प्रतिहारी—नागरिक दुर्ग में चतुर्दिक् उपस्थित हैं। महा-दंडनायक तथा विनयस्थितिस्थापक कुछ नागरिकों के साथ विराजमान हैं ! आपका दर्शन करना चाहते हैं !

महामात्य—उन्हें सम्मुख आने दो !

(अमात्यों का अनुगमन करते हुए कतिपय नागरिकों का प्रवेश होता है। कई स्त्रियां हैं, जिनका मुख म्लान है। कई पुरुष-स्त्रियों के नेत्र से अश्रु बह रहे हैं, सर्वत्र निस्तब्धता छाई है। उस दल में दो व्रात्य भी हैं। भिक्षुओं का वर्ग पृथक् है। वे गेरुआ वस्त्र पहने हैं। भिक्षुओं के हाथ में भिक्षा पात्र नहीं है।)

महामात्य—कहिए दण्डनायक इतने व्यक्ति यहां क्यों ?

महादण्डनायक—देव, बाहर सहस्रों नागरिकों की भीड़ लगी है।

में कतिपय प्रमुख व्यक्तियों को सेवा में लाया हूँ। पाटलीपुत्र से कुछ दूर संघाराम के समीप एक ग्राम में विद्रोहाग्नि भड़क उठी है। उसी का यह परिणाम है।

महामात्य—सुना जाता है कि एक बौद्ध भिक्षु ग्राम से एक बालिका को बलात्कार पकड़े लिए जा रहा था। ग्रामीणों ने देख लिया। बालिका का चीत्कार सुनकर सब दौड़े और भिक्षु को मारा पीटा। संघ के भिक्षुओं को ज्ञात हुआ तो उन्होंने ग्रामीणों से विवाद किया। ग्रामीणों ने आवेश में आकर भिक्षुओं पर प्रहार किया और उनके संघाराम में अग्नि प्रज्ज्वलित कर दी।

महामात्य—महादण्डनायक।

दण्डनायक—देव!

महामात्य—अपराधियों को कारागार में बन्द किया जाय। इनके अभियोग की छान बीन की जाय। (विनयस्थितिस्थापक की ओर देखते हुए) विनयस्थितिस्थापक।

विनयस्थितिस्थापक—देव!

महामात्य—संघाराम की पुनः स्थापना की जाए। भिक्षु भिक्षुणियों के वास स्थान तथा भोजनादि की पूरी व्यवस्था होनी चाहिये।

विनयस्थितिस्थापक—जो आज्ञा देव!

(भिक्षुओं की आकृति पर प्रसन्नता झलकने लगी। ग्राम प्रमुख का मुख क्रोध से तमतमाने लगा। एक ग्रामीण स्त्री आवेश में आकर चीत्कार करने लगी, "देव, स्त्रियों का अपमान! बौद्ध भिक्षु! अनर्थ!" सहसा महाप्रतिहार सन्निकट पहुंचकर वर्जित करता है। उपस्थित जनता क्रम २ से बाहर जाती है। महामात्य गम्भीर मुद्रा में वाटिका के मध्य टहलने लगते हैं।)

प्रथम अंक

[तृतीय दृश्य]

[साकेत नगरी में सरयू नदी के पवित्र तट पर एक विशाल और सुदृढ़ राज प्रासाद है। उसके विस्तृत प्रांगण में उच्च चत्वाल के ऊपर एक शिवालय स्थित है। द्वार-स्तम्भ के दक्षिण पार्श्व में मकर-वाहिनी गंगा और वाम भाग में कूर्म-वाहिनी यमुना की मूर्ति है। गंगा और यमुना की मूर्ति के ऊर्ध्व भाग पर गन्धर्व प्रतिमा दृष्टिगत होती है।

मन्दिर के गर्भ गृह में "एक मुख लिंग" की मूर्ति स्थापित है। मूर्ति गोलाकार है, परन्तु एक ओर मनुष्य के सिर की आकृति बनी हुई है। भगवान शिव के ललाट पर तृतीय नेत्र दिखाई पड़ता है। कण्ठ में हार तथा श्रवणों में कुण्डलों के अतिरिक्त अन्य आभूषण नहीं।

एक गौर वर्ण, विशालकाय पुजारी मस्तक, उदर तथा बाहुओं पर भस्म लगाए प्रतिमा-पूजन में संलग्न है। उसके सम्मुख लाल पुष्प, भस्म, विल्व पत्र इत्यादि पूजा सामग्री विद्यमान है। पुजारी पय मिश्रित तीर्थ जल से प्रतिमा को स्नान करा रहा है।

मन्दिर के तीन भाग में अन्तरीय बांधे और उत्तरीय ओढ़े ब्राह्मण वर्ग रुद्री का पाठ उच्च स्वर से कर रहे हैं। आरती का आयोजन किया जा रहा है। कुमार देवी स्वयं आरती के निमित्त घृत में वर्तिका डुबो कर ला रही है। कई परिचारिकायें उनके पीछे देव-प्रसाद लाती हुई दृष्टिगत हो रही हैं]।

कुमार देवी—पुजारी !

पुजारी—महादेवी ! आज्ञा !

कुमार देवी—अभी आरती में क्या विलम्ब है ?

पुजारी—स्वल्प भी नहीं महादेवी !

कुमार देवी—[परिचारिकाओं की ओर दृष्टि फेरती हुई] कमला !

कमला—महादेवी !

कुमार देवी—महारानी को पुनः स्मरण दिला दो कि शिव पूजन की वेला हो गई है।

कमला—जो आज्ञा महादेवी !

[कमला शिवालय से बाहर जाती है]

पुजारी—महादेवी ! आप भी प्रतिमा को स्नान कराइये !

[महादेवी के सम्मुख पूजा-सामग्री रक्खी जाती है। महादेवी पूजा करती हैं ! ब्राह्मण मन्त्र पढ़ते जाते हैं। पुजारी आरती करते हैं। सभी उपस्थित शिव-भक्त शिव स्तुति करते हैं। घंटा घड़ियाल-मृदंग की ध्वनि सुनाई पड़ती है। पुजारी सबको आरती दिखाते हैं।]

कुमार देवी—पुजारी !

पुजारी—महादेवी ! आज्ञा !

कुमार देवी—(स्वर्ण थाल में दक्षिणा चढ़ाते हुए) मैं एकान्त में शिव स्तुति करना चाहती हूं। क्या पूजा विधिवत् समाप्त हो चुकी है ?

पुजारी—महादेवी ! आज महामृत्युञ्जय जाप समाप्त हो गया और पूजा विधिवत् सम्पन्न हो चुकी।

[पुजारी का संकेत पाकर समस्त पुजारी और ब्राह्मण देवालय से बाहर जाते हैं। केवल परिचारिकाएं रह जाती हैं। कुमार देवी शिव-स्तुति करती हैं। परिचारिकाएं वाद्य व्यवस्था करती हैं। [कमला का प्रवेश]

कुमार देवी—क्या महारानी आ रही हैं ?

कमला—[मुख विकृत करके] आएं चाहे न आएं । मैं क्या करूं ? वह झल्ला उठीं, जली कटी सुनाने लगीं, मैं भाग आई !

कुमार देवी—क्यों क्या बात है ?

कमला—आप पूजन और स्तुति समाप्त कर लें तो बताऊंगी !

[कुमार देवी प्रतिमा को देखकर भावावेश के साथ स्तुति करती हैं ।

हरे शिव ! तुम्हीं हो सकल सिद्धिदाता !
निखिल विश्व-नायक विभव के विधाता !
कृपा-कोर जिस पर तुम्हारी हुई है,
वही अन्ति जन का बना दुःख भाता !
यही शास्त्र कहते यही वेद गाते—'
महादेव से दीन याचक अघाता !
हमारी विनय पर प्रभो ध्यान दीजे,
बनें हम अखिल विश्व के शान्ति दाता !

भाव विभोर कुमार देवी साष्टांग दण्डवत् कर रही हैं । महारानी अपनी परिचारिकाओं के साथ प्रविष्ट होती हैं !

कुछ क्षण तक नितान्त निस्तब्धता रहती है । कुमार देवी क्रम क्रम उठ कर बैठती हैं । (महारानी को देखकर)

कुमार देवी—बहिन, आप आ गईं ! पुजारी कह रहे थे कि शिव पूजन विधिवत् सम्पन्न हो गया है । महाराज का अवश्य मङ्गल होगा ।

(महारानी की आकृति क्रोध से आरक्त हो गई, किन्तु कुछ बोलती नहीं ।)

कुमारदेवी—अटवी प्रदेश में कई महीनों से महाराज घिरे पड़े हैं। गुप्तचरों द्वारा भी उनका कोई समाचार नहीं मिला। इसी निमित्त महामृत्युञ्जय का जाप कराया है। इसके द्वारा विघ्न-विनाशक शिव शम्भु उनके संकटों का निवारण करेंगे और राज्य का मङ्गल होगा !

महारानी—मैं बालिका नहीं हूं महादेवी ! मैं सब समझती हूं। मैं भली प्रकार जानती हूं कि इस पूजन-अर्चन का उद्देश्य क्या है ! और मुझे प्रतारणा देकर साकेत क्यों बुलाया गया है। यह सब कुचक्र लिच्छवियों का रचा हुआ है। महाराज को अटवी प्रदेश में भेजकर लिच्छवी इस साम्राज्य को अपने अधिकार में करना चाहते हैं और समुद्रगुप्त को सिंहासनासीन करने का स्वप्न देख रहे हैं; यह उनका नितान्त भ्रम है !

[कुमार देवी विस्मय-विस्फारित नेत्रों से महारानी की ओर देख रही है !]

कुमार देवी—महारानी, आप क्या कह रही हैं ?

महारानी—महादेवी, मैं सत्य कह रही हूँ। आप मुझे और अधिक धोखे में न रखिये ! मेरे पुत्र के विरुद्ध इतना षड्यन्त्र ! दैवी शक्ति को भी अपनी प्रवंचना में सम्मिलित कर रही हो ? क्या सैन्य शक्ति और अमात्यगण आपके मनोरथ सफल करने में असमर्थ थे ? क्या इनके द्वारा समुद्रगुप्त सिंहासनासीन नहीं हो सकता था कि शिवशङ्कर के त्रिशूल की भी आवश्यकता पड़ी !

कुमारदेवी—महारानी, आपका कथन समझने में मैं अपने को असमर्थ पाती हूं ! आप क्या कह रहीं हैं ?

महारानी—भोली न बनो महादेवी ! मैं तो स्पष्टवादिनी हूँ !

मुझे गुप्तचरों से विदित हुआ है कि लिच्छवी मगध पर अधिकार प्राप्त करके साकेत और मगध की सम्मिलित शक्ति द्वारा मेरे पुत्र को कामरूप में पराजित करना चाहते हैं। इसमें समुद्रगुप्त की भी अभिसन्धि है। महत्वाकांक्षी समुद्रगुप्त मेरे निस्सहाय पुत्र कच का वध करके निष्कण्टक राज्य का अभिलाषी है! इसी निमित्त पश्चिमी राजाओं से मैत्री करने गया है। मैं सब समझती हूँ।

कुमार देवी—महारानी, गुप्तचरों ने आपको मिथ्या ··

महारानी—गुप्तचरों ने मुझे मिथ्या नहीं सत्य सन्देश दिया है महादेवी!

कुमार देवी—गुप्तचरों ने हमें कुछ और ही सूचना दी है महारानी! मेरे लिए समुद्र और कच दोनों आंख की पुतली के सदृश हैं। लघु भ्राता कच के हित और अनहित में समुद्र का हित अनहित निहित है! मुझे गुप्तचरों से जो सन्देश··

महारानी—आपको क्या सन्देश प्राप्त हुए हैं?

कुमार देवी—वाकाटकों की दुरभिसन्धि के द्वारा महाराज विन्ध्य के पास अटवी प्रदेश में घेर लिए गए हैं! दन्तकथा प्रसारित की जा रही है कि मगध के स्वर्गीय राजा सुन्दर वर्मन की स्त्री से एक पुत्र रत्न उत्पन्न हुआ था। वह अब वयस्क हो गया है! अतः वाकाटक नरेश अपने दौहित्र को मगधाधीश बनाने के लिए महाराज का अमङ्गल करना चाहते हैं। इसी के परिहार हेतु मैंने मृत्युञ्जय का जाप कराया है महारानी।

महारानी—महादेवी, मैं नितान्त अबोध बालिका नहीं हूँ जो आप मुझे इस प्रकार प्रतारित करना चाहती हैं! महाराज

एक युग से मगधाधीश बने हैं। उन्हें राज्यच्युत करने की शक्ति स्वयं आपके शङ्कर में भी नहीं है। मैं इस कपोल कल्पना में विश्वास करने वाली नहीं।

[एक वृद्ध ब्राह्मण विदूषक मस्तक पर चन्दन लगाये अन्तरीय बांधे, बदन पर भभूत रमाए लकुटी के सहारे प्रवेश करता है।]

विदूषक—महादेवी, आप महारानी को इस युवावस्था में ही अपनी भांति विरक्त बनाना चाहती हैं क्या ?

(महारानी की ओर देखते हुए !)

महारानी, अभी से ही पुजारी पण्डितों के कुचक्रों में फंसने लगीं तब तो अनर्थ हो जायगा ! ऐसी दशा में हमारे महाराज किसी अन्य षोड़शी के प्रेम-पाश में आबद्ध होने को बाध्य होंगे ! और इस ब्राह्मण को राज्य-मंगल के लिये·····

महारानी—चुप रहो। राज्य का मंगल करने आए हो ! राज्य का मंगल लिच्छवी के राजपूत करेंगे। ब्राह्मणों से क्या होगा ! पुजारी ब्राह्मण पूजा के अरि हैं ! इनसे राज्य का मंगल हो चुका ! वास्तविक ब्राह्मण वह है जो एक हाथ में शास्त्र और दूसरे में शस्त्र धारण करता है !

विदूषक—ब्राह्मण और अस्त्र-शस्त्र। हरे शिव शिव ! नमो शिवाय ! वही ब्राह्मण राज्य का कल्याणकारी हो सकता है जो हमारे सदृश पूप और मोदक पर टूट पड़े। वही आदर्श ब्राह्मण। इसी कारण इन ब्राह्मणों को महाराज ने उपाधि दी है-"स्थपति सम्राट्" समझे ! (सब की आकृति पर स्मिति छा जाती है)

लक्ष्मी—और आदर्श क्षत्रिय कैसा होना चाहिए विदूषक ?

विदूषक—आदर्श क्षत्रिय वह है जो वात्स्यायन का गोपनीय काम

शास्त्र पढ़कर नई २ षोड़शी से व्याह करे और अरि के बाण-प्रहार से भाग कर नारी के कटाक्ष से आहत हो !

महारानी—चुप रहो विदूषक ! मुझे तुम्हारा प्रहसन अरुचिकर प्रतीत होता है। यहां राज्य की विषम समस्यायें व्याकुल कर रही हैं और तुम विनोद-प्रिय बन रहे हो !

विदूषक—राज्य की समस्याओं का सुलझाना क्या कठिन है महारानी !

लक्ष्मी—आप अनुभवी ब्राह्मण हैं, कोई मार्ग बताइए न !

विदूषक—मार्ग सीधा और सरल है !

लक्ष्मी—किस प्रकार ?

विदूषक—पुरुषों को गृहिणी बना दिया जाय और रमणियों को युद्ध क्षेत्र में भेज दिया जाय। अस्त्रागारों में लौह के अस्त्र शस्त्र के स्थान पर शृंगार मंजूषायें निर्मित की जायें ! कवियों के कथनानुसार भौंहों के कमान से कटाक्षों के तीर निरन्तर छोड़े जायें। बड़े बड़े वीर योद्धा शत्रु स्वतः धराशायी हो जायेंगे ! इस प्रकार षोड़शशृंगार करने वाली युवतियों की एक महती सेना निर्मित की जाये तो महादेव जैसा शक्तिशाली भी पराभूत हो जाए !

(महारानी के होटों पर भी स्मिति रेखा खिच जाती है)

महारानी—चुप रहो विदूषक ! तुम्हारे अनर्गल वचन मैं नहीं सुनना चाहती !

विदूषक—वात्स्यायन महाराज कहते हैं कि कामिनी जिसके लिए नहीं करे उसमें स्वीकृति समझो। जिसके लिए बार २ अस्वीकृति दे उसमें उसकी पूर्ण स्वीकृति समझो ! अतएव अब मैं

आपकी आभ्यन्तरिक अभिलाषा समझ कर वात्स्यायन......

महारानी—भस्म कर दो अपने वात्स्यायन को ! चुप रहो !

विदूषक—[भय-भीत होने की मुद्रा बनाते हुए दोनों हाथों से मस्तक को ढकता हुआ भागने की चेष्टा करता है ।]

[दुर्गे ! त्राहि माम, दुर्गे ! त्राहि माम]

(विदूषक शिवालय से बाहर जाता है)

कुमार देवी—महारानी, त्रिशूलपाणि-शंकर से यही प्रार्थना है कि पुत्र कच चिरंजीवी रहे और राज्य में सर्वत्र शान्ति और मंगल व्याप्त हो जाए !

महारानी—और यह भी क्यों नहीं कहती कि समुद्र अपने मित्र राज्यों की सहायता से मगध का महाराजाधिराज बने ! इसी उद्देश्य से तो मथुरा की ओर गए हैं ! (मुंह विकृत करती हुई) लाएं, भले ही अपने सहायक राजाओं को लाएं । मैं भी देखती हूं !

कुमार देवी—महारानी, वह तो शकों के विरुद्ध युद्ध करने गए हैं ! देश में सर्वत्र कलहाग्नि सुलग रही है । [प्रतिमा की ओर देखती हुई] भगवान् शंकर क्या होगा !

महारानी—(क्रोध मुद्रा में) होगा क्या ! होगा समुद्रगुप्त महाराजाधिराज । और क्या होगा ! इसी निमित्त तो यह पूजनोपचार का आडम्बर........

[क्रुद्ध भाव से बाहर जाती है]

कुमार देवी—सुनिए महारानी, मैं अपना हृदय निकाल कर आपके सामने........

महारानी—सुन चुकी ! बड़ी सत्यवादिनी........

[आवेश में द्रुत गति से बाहर जाती है । कुमार देवी उनके पीछे जाती है ! परिचारिकायें पूजन सामग्री समेट कर कुमार देवी का अनुसरण करती हैं]

———

द्वितीय अंक

[प्रथम दृश्य]

[यमुना के तट पर एक रमणीक उद्यान है । लता कुंजों के बीच कतिपय पर्ण कुटीर बने हैं । स्थान २ पर पुष्प वाटिकाएं सुशोभित हैं। कुटीर से कुछ दूरी पर कौपीन लटक रहे हैं । कपोत और शुक दल उड़ता दिखाई दे रहा है । कहीं २ पक्षियों का कलरव पंचम स्वर में सुनाई पड़ रहा है । दूर खेतों में हरिण कुलाचें भरते दृष्टिगोचर होते हैं ।

एक कुटीर के सम्मुख व्याघ्र चर्म के कई आसन रखे हैं । एक आसन पर स्वामी शिवानन्द बैठे हैं । सन्ध्या होने में अधिक विलम्ब नहीं है । स्वामी जी साधकों से धर्म सम्बन्धी चर्चा कर रहे हैं । दर्शकों में यौधेय राज महिषी भी हैं । [महाराज समुद्रगुप्त व हरिषेण का प्रवेश । दोनो व्यक्ति स्वामी जी को प्रणाम करते हैं ।]

शिवानन्द—(आयुष्मान् भव) कहो वीर योद्धा ! कुशल तो है ?

समुद्रगुप्त—कुशल तो आपके आशीर्वाद का अनुगामी है योगिराज !

शिवानन्द—क्या समाचार लाये हो ?

समुद्रगुप्त—युद्ध के पूर्व आपने जो भविष्य वाणी की थी, वह सत्य और सफल हुई !

शिवानन्द—(हंसते हुए) मेरी भविष्यवाणी सत्य हुई या पराक्रमी आत्मविश्वासी योद्धा का प्रयास सफल हुआ !

हरिषेण—दोनों बातें हुई महाराज !

[सब की आकृति पर स्मिति रेखा]

शिवानन्द—(समुद्रगुप्त की ओर देखकर) और क्या समाचार है ?

समुद्रगुप्त—आपने युद्ध का सारा वृत्तान्त तो सुन ही लिया होगा।

शिवानन्द—कुछ सुना अवश्य, किन्तु वक्ता को स्वतः इस बात का ज्ञान नहीं कि महायोद्धा समुद्रगुप्त ने क्षत्रपों को इतना शीघ्र कैसे पराजित कर दिया ! यह चमत्कार कैसे हुआ वीर !

हरिषेण—योगिराज, हमारे महाराज वीणा वादन तो करते ही हैं, नृत्य कला में भी अति प्रवीण हैं ! इन्होंने अपने नृत्य से शकों को चमत्कृत कर दिया ! (समुद्रगुप्त की ओर देखकर) क्यों महाराज यही बात है न !

समुद्रगुप्त—(हंसते हुए) स्वामिन्, वास्तव में भारतीय नृत्य में युद्ध कला से भी अधिक शक्ति है, इसका प्रमाण मुझे उस दिन ही मिला !

शिवानन्द—यह तो यौधेयगण के शिविर की घटना थी ! आपने क्षत्रप नरेश भद्रदास को किस प्रकार बन्दी बनाया ? विशाल शकसेना का सामना आपके श्रान्त क्लान्त सैनिकों ने किस प्रकार किया ?

समुद्रगुप्त—मुझे स्वयं आश्चर्य होता है स्वामिन् ! जो कुछ किया भगवान शंकर ने किया। मुझ में और मेरी सेना में कहां इतना पुरुषार्थ !

शिवानन्द—भगवान मनुष्य को सुमति देता है, परन्तु उसका सदुपयोग तथा दुरुपयोग करना मानव के वश में होता है ! आपने किस प्रकार उसका सदुपयोग किया ?

समुद्रगुप्त—मैंने स्थिति समझ ली थी । सैनिक विजयोन्मत्त थे ! उन्मत्त व्यक्ति को सदसद् का विवेक कहां ! उनके सम्मुख प्रलोभन था कामिनी, कंचन और सुरा का ! कदंब और कंचन उन्हें प्राप्य था ! उन्हें लालसा थी कामिनी की ! वहां भी

नर्तकियां भेजकर मैंने उन्हें विवेक-शून्य बना दिया। मेरे युवक सैनिकों ने नर्तकियों का रूप धारण कर रखा था। उन्होंने गुप्त रीति से शस्त्र धारण किये थे ! तत्रप सैनिकों के प्रमाद की सीमा न थी। हमारे सैनिकों ने उनका वध इस रीति से किया मानो कृषक सूखी खेती काट रहे हों ! कुछ शत्रु आहत हुए ! खलबली मच गई ! कुछ नागरिकों को मैंने कोलाहल मचाने के लिए नियुक्त कर दिया था। वह कहते फिरते थे कि मगध से विशाल सेना आ गई है ! किसी शक सैनिक के प्राण न बचेंगे ! इस कल्पनातीत परिवर्तन से प्रमादी शक स्तम्भित रह गये ! विलास भवन के मध्य नर्तक नर्त्तकियों ने संकेत पाकर युद्ध आरम्भ कर दिया और बाहर हमारे वीर सैनिकों ने !

राजमहिषी—योगिराज, जिस समय यह महाराज हम लोगों को मुक्त करने पहुँचे, हमने समझा कि स्वयं शंकर भगवान् आ गये हैं !

शिवानन्द—शंकर भगवान सब में निवास करते हैं देवी ! इस वीर योद्धा ने इस सिद्धान्त को समझा है !

समुद्रगुप्त—नहीं स्वामिन् ! मैंने कोई सिद्धान्त अभी तक समझा नहीं, किन्तु समझना चाहता हूं ! मुझे अब इस बात पर खेद हो रहा है कि मेरे कारण इतने प्राणियों का वध हुआ ! क्या यह हिंसा नहीं है महाराज।

हरिषेण—स्वामिन् ! महाराज उसी दिन से इस विषय पर मुझ से विवाद करते हैं कि मैंने हिंसा करके धर्म विरुद्ध आचरण किया ! बौद्ध-सिद्धान्त के प्रतिकूल कर्म किया।

शिवानन्द—(हंसते हुए) क्यों समुद्र ! क्या तुम्हारा सखा तुम्हारे

हृदयगत भावों को ठीक समझ रहा है ?

समुद्र—योगिराज, मेरा यह प्रथम युद्ध था। इससे पूर्व आचार्य से शस्त्र विद्या प्राप्त की थी, किन्तु उसका उपयोग प्रथम बार यहीं हुआ! युद्ध के पश्चात् आहत शकों को देखकर मुझे करुणा उत्पन्न हुई! हृदय को मैं समझा नहीं पाता हूँ योगिराज! मुझे समझाइए! क्या मुझे इन कर्मों का फल नहीं भोगना पड़ेगा ?

शिवानन्द—समुद्र, साधारण मनुष्य को अपने ही कर्मों का फल भोगना पड़ता है, दूसरे के कार्यों का नहीं, किन्तु राजा के दुष्कर्मों का फल समस्त प्रजा को पीड़ित करता है! इसलिए यदि राजा आततायी हो जाय तो देश और समाज में दुख बढ़ जाता है! इसे स्वीकार करते हो या नहीं ?

समुद्रगुप्त—स्वामिन्, यह बात तो समझ में आती है!

शिवानन्द—अब भगवान बुद्ध के सिद्धान्तों को समझो! बुद्ध के आर्य सत्य चार हैं! कौन कौन ?

समुद्रगुप्त—दुःखम्, समुदयः, निरोधः, निरोधगामिनि प्रतिपद्!

शिवानन्द—जिस प्रकार व्यक्ति के दुख का कारण उसकी तृष्णा है, उसी प्रकार समाज के दुख का कारण राजा तथा शासक की काम तृष्णा, भव तृष्णा तथा विभव तृष्णा है! इसे ही समुदयः कह सकते हैं! क्या इसे स्वीकार करते हो ?

समुद्रगुप्त—अवश्य योगिराज!

शिवानन्द—अब समाज को दुख निरोध की ओर ले जाना क्या समर्थवान व्यक्तियों का धर्म नहीं हो जाता!

समुद्रगुप्त—हो जाता है योगिराज!

शिवानन्द—अब चतुर्थ आर्य सत्य है "दुख-निरोध-गामिनि प्रतिपद्" इसका भाव क्या हुआ समुद्र ?

समुद्र—दुख के कारण–विनाश का मार्ग !

शिवानन्द—अतएव क्या समर्थवान व्यक्ति का कर्त्तव्य नहीं हो जाता कि वह मार्ग ढूंढ निकाले !

समुद्रगुप्त—अवश्य हो जाता है योगिराज !

शिवानन्द—अब रहा मार्ग निकालने का साधन !

समुद्रगुप्त—यहीं तो सैद्धान्तिक अन्तर है योगिराज !

शिवानन्द—अन्तर कहां है समुद्र ! स्मृतिकार बतलाते हैं साम द्वारा शत्रु को समझा बुझा कर युद्ध से विरत करना सर्वोत्तम साधन है ! यदि किसी प्रकार यह साधन सफल न हो सके तो दाम, दण्ड और भेद का प्रयोग करना चाहिए ! शक आततायी थे। उनसे समाज–विशेषत: नारी समाज–अति त्रस्त था ! उस आपत्ति का निवारण कर आपने धर्म वृद्धि की है !

[यौधेयराजमहिषी स्वर्ण-थाल में पूजन की सामग्री लाती हैं। संध्या हो रही है ! भजन-पूजन की बेला हो गई है ! स्वामी जी एकान्त में कुछ साधना करने चले जाते हैं।]

शिवानन्द—समुद्र, सूर्यास्त हो रहा है ! मैं शिवाराधन के लिए जा रहा हूं ! थोड़ी देर में आऊंगा !

[योगिराज बाहर जाते हैं तो भक्तगण खड़े हो जाते हैं। उनके जाने पर बैठ जाते हैं। राजमहिषी भी चली जाती हैं। राजकुमारी की सखियां पूजन-उपचार लेकर आती है।]

हरिषेण—महाराज !

समुद्रगुप्त—अब भजन कीर्तन होना चाहिए। योगिराज कह गये हैं।

एक सखी—युवक, हमने सुना है कि महाराज वीणा-वादन तथा गान विद्या में प्रवीण हैं! हम उनसे संगीत तथा भजन सुनना चाहती हैं!

हरिषेण—सुनाओ महाराज, योगिराज की आज्ञा और हमारी प्रार्थना आप भले ही न मानें, किन्तु प्यारी राजकुमारी की इच्छा और उनकी सखियों की आज्ञा को आप कैसे ठुकरा सकते हैं!

समुद्रगुप्त—तुम तो कवि हो, कोई कविता ही सुनाओ!

हरिषेण—मेरी कविता कौन सुनेगा? यहां कुमारियां वीणा पर आपके सुकुमार करों का नर्तन देखना चाहती हैं और सुनना चाहतीं हैं आपके कंठ की मधुर ध्वनि! इस कुंज की ललित लतिकायें आपके कोकिल सदृश काकली सुनने को मचल रही हैं! शुभ्र-ज्योत्सना से धुली वृक्षावलियां सिर हिला हिला कर सखियों के निवेदन का अनुमोदन कर रही हैं! राजकुमारी गायेंगी, किन्तु प्रथम गान आपका ही होना चाहिये!

समुद्रगुप्त—अच्छा, मैं तुम्हारा बनाया गीत गाता हूं।

हरिषेण—नहीं महाराज, आप स्वरचित गीत सुनाइये। इस समय सुकुमार किशोरियां आपका परीक्षण कर रही हैं! आपके गीत से संगीत की परीक्षा के साथ साथ आपकी कवित्व शक्ति भी परखी जायगी!

समुद्रगुप्त—(हंसते हुए) अच्छा सुनो! शङ्कर की वन्दना सुनाता हूँ।

हरिषेण—महाराज, भैरव रूप शिव की स्तुति न करना ।

समुद्रगुप्त—क्यों ?

हरिषेण—यह आश्रम है न कि युद्धक्षेत्र ! आप कहीं इस स्थल को भी युद्ध स्थल न समझ लें, क्योंकि मैं आपका एक युद्ध देख कर आ रहा हूँ !

समुद्रगुप्त—किसकी बन्दना करूं !

हरिषेण—उमापति शङ्कर महादेव की ।

समुद्रगुप्त—[वीणा वादन के साथ गाता है ।]

उमापति महादेव तेरी विजय हो !
तुम्हें त्याग शङ्कर मनाऊं किसे मैं,
तुम्हीं भक्त को नित्य करते अभय हो !
उमापति·········विजय हो !
सुरासुर परम विष से जलते निरख कर,
गरल का किया पान ऐसे सदय हो !
उमा···········विजय हो ।

हरिषेण—(सखियों की ओर देखकर) हमारे महाराज का गान हो चुका । अब हम आपकी राजकुमारी का संगीत सुनना चाहते हैं ।

सखी—(राजकुमारी से) राजकुमारी, महाराज के प्रेम में इतने दिनों से विभोर हो रही हो ! अब उन्हें गान द्वारा अपना आशय समझा दो न !

मालती—सखी, तू अत्यन्त निर्दय है (कान में कुछ कहती है)

हरिषेण—राजकुमारी क्या कह रही हैं सखियो ?

सखी—राजकुमारी मालती कह रही हैं कि महाराज सङ्गीत कला

के ऐसे अच्छे मर्मज्ञ हैं। उनके सरस सङ्गीत के उपरान्त मेरा शुष्क गान किस प्रकार प्रिय प्रतीत होगा!

हरिषेण—शुष्क शब्द भी स्निग्ध हृदयसरोवर से निकलने पर सरस बन जाते हैं! और यदि उन्हें राजकुमारी का मुख कमल मिल जाय तो कहना ही क्या! वे तो रस से ओतप्रोत हो जाते हैं! अतएव राजकुमारी मालती को गाना सुनाना ही पड़ेगा।

सखी—(राजकुमारी से) राजकुमारी, सुना दो न! महाराज के हृद्गत विचार उनके सखा के मुख से निकल रहे हैं।

दूसरी सखी—सुना दो, अन्यथा पछताओगी! हां!

मालती—अच्छा सुनो! गाती हूं! कौन गीत गाऊं!

सखी—जो तुम्हें सर्व प्रिय प्रतीत होता हो।

मालती— वह रूप बसा जब नैनों में,
बन गई नई बस्ती मेरी।
स्मृतियों के झूले झूल रही,
नित मचल मचल मस्ती मेरी।
मन-मानस पर मुख-चन्द्र-किरण,
की नव नव होती है लीला।
अभिलाषा यौवन में भरती,
प्रति अवयव होता ढीला।

[स्वामी शिवानन्द जी का प्रवेश]

स्वामी शिवानन्द—क्या आप लोग शिव-पार्वती की वन्दना कर चुके?

हरिषेण—शिव की वन्दना तो हुई किन्तु पार्वती की नहीं।

शिवानन्द—पार्वती की बन्दना के बिना शिव की बन्दना अपूर्ण रहती है।

समुद्र गुप्त—यह क्यों योगिराज ?

शिवानन्द—शिव तो अर्द्धाङ्ग ही ठहरे। अर्द्धाङ्गिनी पार्वती के बिना वह पूर्ण कैसे हो सकते हैं ?

समुद्रगुप्त—वह क्यों स्वामिन् !

शिवानन्द—हिन्दू धर्म में स्त्री ही पुरुष को पूर्ण बनाती है। विवाह धार्मिक जीवन का प्रधान अङ्ग है।

समुद्रगुप्त—बौद्ध धर्म में विवाह के बिना ही पुरुष जीवन भिक्षु बनने से पूर्ण हो जाता है। हिन्दू धर्म में इसकी (विवाह की) महत्ता इतनी क्यों रक्खी गई है ?

शिवानन्द—हमारे स्मृतिकार मानते हैं कि पति-पत्नी का प्रेममय जीवन पृथ्वी को स्वर्ग बना देता है।

समुद्रगुप्त—वह कैसे महाराज ? क्या अविवाहित जीवन स्वर्गीय नहीं बन सकता ?

शिवानन्द—दाम्पत्य सुख की तुलना कौन कर सकता है समुद्र ?

समुद्रगुप्त—इस दाम्पत्य जीवन में दुख भी तो है योगिराज।

शिवानन्द—दाम्पत्य प्रेम वह रसायन है जिसके द्वारा अति विकराल दुख भी सुख में परिणित हो जाता हैं।

[राजमहिषी का प्रवेश। स्वर्ण थाल में पूजा के पुष्पहार चन्दन इत्यादि सामग्रियां रक्खी हैं]

शिवानन्द—क्या लाई हो महारानी ?

राजमहिषी—योगिराज, पूजन की सामग्री है और कुछ नहीं।

शिवानन्द—किसका पूजन होगा और कौन करेगा ?

राजमहिषी—महाराज समुद्रगुप्त ने मालती की प्राण रक्षा की है। इस पर उनका अपार ऋण है। मालती कहती है कि अब प्राणों पर उसी देव का अधिकार है, जिसने इसे बचाया है। इसी निमित्त पूजा सामग्री लाई हूँ।

शिवानन्द—महाराज समुद्र ! यह तो अत्यन्त प्रसन्नता की बात होगी। तुम और मालती विवाह के योग्य हो गए हो। इस अवस्था में विवाह बन्धन नर नारी को उच्छृंखल होने से बचा लेता है।

राजमहिषी—[मालती से संकेत करती है। मालती एक पुष्पहार योगिराज को पहनाती है। दूसरा स्वर्णहार समुद्रगुप्त को पहनाना चाहती है। समुद्रगुप्त खड़ा होकर माला हाथ में पकड़ लेता है। कंठ में पहनाने नहीं देता]

समुद्रगुप्त—योगिराज ! युद्ध में जाने से पूर्व आपने कहा था—"माता के अवयव ध्वस्त हुए"। आपके इन शब्दों को जितना सोचता हूँ उतना ही अर्थ गम्भीर पाता हूं। माता के अंग ध्वस्त पड़े हों और पुत्र विवाहोत्सव मनाए, यह अनुचित प्रतीत होता है। मेरा एक ही संकल्प है योगिराज !

शिवानन्द—क्या संकल्प है समुद्र !

समुद्र—माता के ध्वस्त अवयवों को संयुक्त करके इसमें शक्ति संकलित करना।

[शिवानन्द मौन धारण कर लेते हैं]

राजमहिषी—मालती आपके संकल्प सिद्धि में बाधक न होगी महाराज ! आप हम लोगों का अनुरोध स्वीकार कीजिए।

समुद्रगुप्त—माता जी ! क्षमा कीजिए ! आप भी मेरी संकल्प सिद्धि में बाधक न हों।

[मालती की मुखाकृति विवर्ण हो जाती है। उसके नेत्रों में आंसू आ जाते हैं। राजमहिषी स्तब्ध रह जाती हैं।]

शिवानन्द—क्या कोई साधक है ?

एक साधक—योगिराज ! हम उपस्थित हैं।

शिवानन्द—विलम्ब हो गया है। राजपरिवार को सावधानी से आश्रम से बाहर पथ तक पहुँचा दो। [राजमहिषी की ओर देखकर] महारानी, आप चिन्तित न हों। मालती तो पार्वती की उपासिका है। तपस्या द्वारा पार्वती को भी वर प्राप्ति हुई थी।

[समुद्रगुप्त से] राजन्, तुम भी पुनः इस पर विचार करो।

[हरिषेण की ओर देखते हुए] कविराज, महाराज को सन्मार्ग की ओर प्रेरित करते रहना।

[उपस्थित मंडली उठती है। प्रत्येक व्यक्ति स्वामी जी को प्रणाम करके जाता है। अन्त में समुद्रगुप्त प्रणाम करते हैं]

शिवानन्द—विजयी बनो भारत के भावी सम्राट्। मैं तुमसे मगध में मिलूंगा। भारत का भविष्य एक शक्तिशाली अधिनायक के हाथ में ही उज्जवल होगा।

समुद्रगुप्त—स्वामिन् ! आपके आशीर्वाद का ही बल है। आप साकेत में कब पधारेंगे।.........

शिवानन्द—मगध में ब्रह्मण्यों और व्रात्यों में मनोमालिन्य बढ़ रहा है। वहां जनता को सन्मार्ग दिखाना है राजन् !

समुद्रगुप्त—मुझे क्या आज्ञा है योगिराज !

शिवानन्द—वीर योद्धा ! तुम अपने में विश्वास रक्खो। संकल्प पर दृढ़ रहो। भगवान शंकर तुम्हारे द्वारा राष्ट्र का कल्याण करेंगे। भारशिवों और वाकाटकों ने जो राष्ट्र निर्माण का पवित्र कार्य प्रारम्भ किया है उसकी पूर्णता तुम्हारे द्वारा हो। यही मेरा आशीर्वाद है।

[समुद्रगुप्त योगिराज के चरण स्पर्श करता है। योगिराज समुद्र के साथ कुछ दूर तक आते हैं]

———

द्वितीय अंक

[द्वितीय दृश्य]

[साकेत नगरी के समीप आम्र बन में एक विशाल मण्डप बना है ! यह मण्डप विविध पत्र पुष्पों से सुसज्जित है । मण्डप के मध्य एक ऊंचा मंच है जिस पर सिंहासन रक्खा है ! बैठने के लिए चतुर्दिक आसन लगे हैं । मण्डप के सम्मुख जन समुदाय हाथों में पुष्प, लाजक इत्यादि मङ्गल वस्तुएं लिए खड़ा है । स्त्रियां रंग विरंगे रेशमी परिधान तथा आभूषण से विभूषित, मंगल गान कर रही हैं । महादेवी कुमारदेवी हाथ में नीराजना लिये आगे आगे जा रही है । उनके दोनों ओर स्वर्ण कलश लिये कुमारियां जा रही हैं । तदुपरान्त अमात्य वर्ग है । उनके पीछे सामन्त, सार्थवाह आदि जा रहे हैं ।

महाराज समुद्रगुप्त, हरिषेण तथा सेना सहित मथुरा से लौट आये हैं । महाराज दूर से ही रथ से उतर कर पैदल जा रहे हैं । तरह तरह के वाद्य बजने लगे हैं । समुद्रगुप्त माता कुमार देवी के चरण छूते हैं । माता कुमार देवी आरती उतारती है । महाराज के ऊपर पुष्प और लाजक की वर्षा होती है । संकेत पाकर बाजा बन्द हो जाता है ।]

समुद्रगुप्त—(मंच पर खड़े होकर) आप लोगों ने मेरा जो स्वागत किया है, उससे मुझे प्रसन्नता हुई है ।

[जन समाज महाराज समुद्रगुप्त का जय जय कार करके चला जाता है]

[महाराज, अमात्य गण कुमार देवी और हरिषेण बैठ जाते हैं । कुमार देवी महाराज का उत्तरीय हटा कर देख रही है शरीर पर कई आघात चिह्न विद्यमान हैं ।]

कुमार देवी—वत्स, हम सब तुम्हारे आगमन की प्रतीक्षा व्यग्रता पूर्ण कर रहे थे। तुम्हें युद्ध में बहुत चोट लगी थी ?

समुद्र गुप्त—युद्ध हुआ कहां कि चोट लगती महादेवी।

कुमार देवी—हमने तो सुना था कि शकों ने मदुरा पर अधिकार कर लिया था! विकट युद्ध हुआ था! क्या यह सब मिथ्या है! किन्तु शक बिना युद्ध किए मानने वाले तो नहीं हैं!

समुद्र गुप्त—महादेवी, मिथ्या तो नहीं, हां अतिशयोक्ति पूर्ण अवश्य है।

कुमारदेवी—शक भाग कैसे गए ?

समुद्रगुप्त—आपकी सेना के आतङ्क से ही वे विकम्पित हो उठे

कुमार देवी—वह कैसे ?

समुद्रगुप्त—वह फिर सुनाऊंगा। यह बताइये महाराजाधिराज का क्या समाचार है ? भाई कच कैसे हैं ?

सन्धिविग्रहिक—महाराज, गुप्तचरों से ज्ञात हुआ है कि महाराजाधिराज को आटविकों ने महाकान्तार में घेर लिया है!

समुद्रगुप्त—(विस्मय से) क्या ? आटविकों ने··· 'महाराजाधिराज को··· 'घेर लिया है। शृङ्गलों ने सिंह पर विजय पाने की चेष्टा की है। और मगध की क्या दशा है ?

सन्धिविग्रहिक—मगध भी कलह का केन्द्र बनना चाहता है!

समुद्रगुप्त—वह कैसे ?

कुमारामात्य—मगध महा मात्य की दुधारी कुटिल नीति से!

समुद्रगुप्त—दुधारी कुटिल नीति क्या ? स्पष्ट बताइये!

कुमारामात्य—मगध महामात्य ने एक पत्र द्वारा कल्याण वर्मा

की ओर संकेत किया था ।

समुद्रगुप्त—वही कल्याण वर्मा जिसे सुन्दर वर्मा का दौहित्य घोषित किया जा रहा था ।

कुमारामात्य—वही कल्याण वर्मा महाराज ! वाकाटक उसे मगध सिंहासन पर बिठाना चाहते थे !

समुद्रगुप्त—क्या ? मगध के सिंहासन पर कल्पित कल्याण वर्मा ?

सन्धिविग्रहिक—महाराज,इस सम्बन्ध दुरभिसन्धि हो रही है ।

समुद्रगुप्त—किस प्रकार ?

सन्धिविग्रहिक—यह पत्र पढ़ लीजिए महाराज !

[समुद्रगुप्त पत्र पढ़ता है । मुद्रा और भी गम्भीर हो जाती है ।]

समुद्रगुप्त—सन्धिविग्रहिक ! कहीं यह पत्र हमें धोखा देने के लिए तो नहीं लिखा गया है ? मगध महामात्य की मुद्रा इस पर लगी थी ?

सन्धिविग्रहिक—यह पत्र मुद्रांकित था महाराज ! विश्वास मानिए !

समुद्रगुप्त—मगध महामात्य वाकाटकों की सहायता करेंगे, यह रहस्य समझ में नहीं आता ।

सन्धिविग्रहिक—यही तो आश्चर्य है । इस षड्यन्त्र में बङ्ग महाराज कच भी सम्मिलित हैं ।

समुद्रगुप्त—क्या कह रहे हो, सन्धिविग्रहिक ? भाई कच साथ देंगे—वाकाटकों का । पूज्य पिता महाराजाधिराज के विरुद्ध ।

कुमारामात्य—महाराज । वाकाटकों द्वारा देश में यह वार्ता प्रसारित की जा रही है कि मगध महाराजाधिराज का

निधन हो गया। अतएव मगध का सिंहासन कल्याण वर्मा को मिलना चाहिए।

समुद्रगुप्त—मेरी अनुपस्थिति में इतनी घटनायें घटित हुईं। आप लोगों ने सूचना क्यों न दी।

कुमारदेवी—वत्स, मैंने ही इन दुःसंवादों को रोक लिया था। तुम्हें इन्हीं कारणों से शीघ्र साकेत बुलाने को दूत भेजे गये थे। तुम्हारा यहां आना आवश्यक था।

समुद्रगुप्त—मां, छोटी महारानी कहां हैं ? सुना था साकेत में उनका पदार्पण हुआ था।

कुमार देवी—मैंने बहुत आग्रह करके साकेत बुलाया था। वह कुछ दिन रहीं फिर कदाचित् पितृगृह चली गईं।

कुमारामात्य—पितृ गृह गईं अथवा शत्रुओं को हम पर आक्रमण के लिए बुलाने गईं।

समुद्रगुप्त—सन्धिविग्रहिक, क्या मगध महामात्य शत्रुओं के सहायक निश्चय रूप से हो गए हैं।

सन्धिविग्रहिक—महाराज, महामात्य ने आपको भी पूर्ण सहायता देने का आश्वासन दिया है! उनकी कूटनीति ने कलह फैला दिया है।

समुद्रगुप्त—राज्य में इतना कलह। केवल मेरे कारण ! यदि यह षड्यन्त्र मेरे कारण चल रहा हो तो मैं इसे त्याग कर कहीं चला जाऊं। कलह—कलह—सर्वत्र कलह। कलह कृत्या बन कर सर्वत्र संहार के लिए भाग रहा है! भगवान शङ्कर।

कुमारामात्य—महाराज! कलह तो संसार में सदा से रहा है और रहेगा। कलह से भयभीत होकर भागना तो दुर्बलता है!

सोचिए न, इस समय महाराजाधिराज को आटविकों की दया पर छोड़ना क्या कायरता न होगी।

समुद्रगुप्त—[कुछ देर तक मौन धारण करके] आटविकों का प्रश्न उतना गम्भीर नहीं है, महामात्य, जितना आन्तरिक कलह का। मगध महामात्य की नीति समझ में नहीं आती कि उन्होंने वाकाटकों को सहायता देने का बचन कैसे दिया ?

कुमारदेवी—वत्स, उन्होंने सहायता का बचन केवल वाकाटकों को ही नहीं दिया है !

कुमारामात्य—महामात्य के पुत्र महावलाधिकृत का पत्र गुप्तचरों को मिला है। वह हमारे पूर्ण सहायक हैं !

समुद्रगुप्त—मगध महामात्य वृद्ध और विद्वान् ब्राह्मण हैं। पिताजी के साथ मगध राज्य की सेवा में उनका अधिकांश जीवन बीत गया। वह कल्याण वर्मा का साथ देंगे और हमारे भी सहायक बने रहेंगे—उनकी यह दोहरी नीति समझ में नहीं आती। क्यों सन्धिविग्रहिक, इसमें क्या रहस्य हो सकता है ?

सन्धिविग्रहिक—महाराज, मगध महामात्य वृद्ध ब्राह्मण हैं और वाकाटक ब्रह्मराय हैं। मेरा विश्वास है कि वह ब्रह्मण्यों के सहायक होंगे !

कुमारामात्य—नहीं महाराज, मगध महामात्य पद के लोभी हैं ! उन्हें कदाचित यह सन्देह हो रहा है कि महाराजाधिराज की शक्ति का ह्रास हो गया है और वाकाटक तथा अहिच्छत्र वंशी सम्मिलित शक्ति द्वारा मगधाधीष बन जायेंगे ! ऐसी परिस्थिति में प्रगतिशील पराक्रम का सहारा क्यों न लिया जाय !

[मन्त्रणा भवन में निस्तब्धता छा जाती है।]

कुमारदेवी—वत्स ! मैं भी कुछ कहूं !

समुद्रगुप्त—अवश्य कहिए।

कुमार देवी—मैंने इस समस्या को गम्भीरता से सोचा है! और एक परिणाम पर पहुँची हूं।

समुद्रगुप्त—किस परिणाम पर पहुँची है ?

कुमार देवी—मगध महामात्य अति अनुभवी तथा दूरदर्शी राजनीतिज्ञ है। उन्होंने वेद शास्त्रों का अध्ययन किया है। उनके सामने इस समय वही धर्म संकट उपस्थित है, जो एक बार कृष्ण के सामने था।

समुद्रगुप्त—कृष्ण के सम्मुख कब ऐसा धर्म संकट आया था ?

कुमार देवी—एक बार अन्धकों और वृष्णियों में वैमनस्य हो गया। कृष्ण के सम्मुख समस्या खड़ी हुई कि किसकी सहायता करे। नारद जी से अपनी कठिनाई वर्णन करते हुए वासुदेव कहते हैं कि हे नारद, यद्यपि मैं अन्धकों और वृष्णियों का स्वामी कहलाता हूं कि मैं दासता ही करता रहता हूं।

समुद्रगुप्त—वासुदेव ने ऐसा क्यों कहा ?

कुमार देवी—वासुदेव ने स्वयं बताया कि हे देवर्षि दोनों वर्गों के नेता आहुक और अक्रूर अपनी वाणी की दुरूक्तियों से मेरे हृदय को इस प्रकार मथते रहते हैं, जिस प्रकार अग्नि चाहने वाला अरणी को मथता हो। मेरी दशा जुआरियों की माता सदृश हो गई है। दोनों में से न एक की विजय चाहता हूं न अन्य की पराजय। मैं उदासीन वृत्ति ग्रहण करना चाहता हूँ।

हरिषेण—महादेवी, वासुदेव ने कायरों के समान व्यवहार किया। उन्हें स्वतः अपनी बुद्धि से निर्णय करके सत्य पक्ष का समर्थन प्रत्यक्ष रूप से करना चाहिए था! क्या नारद मुनि ने उन्हें समझाया नहीं।

कुमार देवी—समझाया वत्स !

हरिषेण—किस प्रकार ?

कुमार देवी—तुम्हारी पद्धति से नहीं, अपनी शैली से !

हरिषेण—नारद की शैली क्या थी ?

कुमार देवी—देवर्षि ने निवेदन किया कि वासुदेव, कुल, जाति या समाज में कलह होने का कारण है लोभ और अमर्ष । जब भी किसी स्थान पर लोभ का जन्म होता है तो दूसरे स्थान पर अमर्ष की उत्पत्ति होती है !

हरिषेण—अमर्ष से क्या हुआ ?

कुमार देवी—अमर्ष के कारण संयुक्त वर्ग में सन्देह स्थान बना लेता है । और संदेह के बीज गुप्तचरों द्वारा विरोध की उर्वरा भूमि में बिखेर दिये जाते हैं । कालान्तर में वे ही बीज कलह के विषवृक्ष रूप में पल्लवित हो उठते हैं । अवसर देखकर उनकी ओट में शत्रु गण प्रहार करते हैं । इस प्रकार विष वृक्ष की ज्वाला और शत्रु के विषाक्त बाण जाति तथा समाज के दोनों वर्गों को भस्मीभूत कर देते हैं ।

हरिषेण—कलह से बचने की युक्ति क्या है ? नारद ने किस प्रकार समझाया ?

कुमार देवी—नारद ने कहा—वासुदेव आप मृदु हृदय पर प्रभाव डालने वाले क्षमा शस्त्र द्वारा ज्ञातियों के हृदय (वाणी) मन को शमन करिए, जिससे लोभ को स्थान न मिले !

हरिषेण—मगध महामात्य स्वयं प्रलोभन में पड़े हैं । सोचते हैं कि साकेत और वाकाटक दोनों का मित्र बना रहूं । जो भी विजयी होगा उसका मंत्रित्व मुझे मिल जायेगा !

कुमार देवी—यह तुम्हारा भ्रम है वत्स ! महामात्य इस प्रकार के प्रलोभनों से बहुत ऊपर हैं !

हरिषेण—हम इसको किस प्रकार मानें ? वह दोनों पक्षों को सहायता का बचन क्यों देते हैं ?

कुमारदेवी—कृष्ण ने क्या किया था ? क्या दोनों की सहायता नहीं की थी ? किन्तु क्या कह सकते हो कि कृष्ण के हृदय में धर्म रक्षा की भावना नहीं थी ।

हरिषेण—नहीं, कृष्ण को नहीं कह सकते, किन्तु मगध महामात्य को कह सकते हैं !

कुमारदेवी—उन्हें भी नहीं कह सकते । महामात्य के हृदय में सबके कल्याण की भावना है ! वह आज सच्चे वीर योद्धा की परीक्षा कर रहे हैं । कल्याण वर्मा और समुद्र की शक्ति की परख हो रही है । जो विजयी होगा, वह मगध का राज्य हस्तगत करेगा । तुम लोग शक्ति संचय करो वत्स यह समय पर-छिद्रान्वेषण का नहीं है, समझे !

समुद्रगुप्त—मैं समझ गया ! आपने धर्म नीति समझाई ! मैं कहता हूँ कि राजनीति के दृष्टि कोण से भी मगध महामात्य को प्रत्यक्षविरोधी बना लेना अदूरदर्शिता है ।

(हरिषेण की ओर देखकर) कविराज !

हरिषेण—महाराज !

समुद्रगुप्त—हमें युद्ध की योजना बनानी हैं ! तुम्हें सेना लेकर मगध जाना होगा । सावधान, मगधमहामात्य को अपने पक्ष में रखने का पूर्ण प्रयत्न करना ! मगध की जनता को प्रसन्न रखना ! स्वामी शिवानन्द जी मगध जाने वाले थे ।

उनका दर्शन अवश्य करना !

(बलाधिकृत की ओर देख कर) बलाधिकृत !

बलाधिकृत—महाराज !

समुद्रगुप्त—सैन्यशक्ति को संगठित करना होगा । साकेत के युवकों को युद्ध के लिए प्रोत्साहित कीजिए ।

बलाधिकृत—जो आज्ञा महाराज !

समुद्रगुप्त—मगध-रक्षा का भार आप और हरिषेण के ऊपर है !

बलाधिकृत—क्या आप मगध न चलेंगे महाराज ?

समुद्रगुप्त—मैं आप से मगध में कुछ समय पश्चात् मिलूंगा ! पितृ देव को आटविकों से मुक्त करना अत्यन्त आवश्यक है !

बलाधिकृत—महाराज, गुप्तचरों से ज्ञात हुआ है कि वाकाटक सेना कल्याण वर्मन की अध्यक्षता में मगध पहुँचने वाली है ! अतएव मगध पर अपना पूर्ण अधिकार प्राप्त कर लेना युद्ध नीति की दृष्टि से अधिक उपयोगी है ।

समुद्रगुप्त—कल्याण वर्मन के लिए हमारी सेना का साधारण सैनिक भी पर्याप्त है । इसके अतिरिक्त लिच्छवी सेना की सहायता आपको मगध में मिलेगी !

हरिषेण—महाराज आप कहां रहेंगे ?

समुद्रगुप्त—मुझे कुछ ऐसा आभास हो रहा है कि वाकाटकों को उनके राज्य में पराजित करना परम आवश्यक है ।

हरिषेण—यह क्यों महाराज ?

समुद्रगुप्त—आटविकों ने पितृ देव से युद्ध का साहस ही वाकाटकों के बल पर किया होगा ! वाकाटक रुद्रसेन का सामन्त

व्याघ्रराज है। उसे महाकान्तार का अधिपति घोषित करके रुद्रसेन महाराजाधिराज को घेर लेने के कलंक से बचना चाहता है! कुमारामात्य, आपका क्या विचार है?

कुमारामात्य—विकट समस्या है महाराज, बुद्धि काम नहीं कर रही है!

समुद्रगुप्त—विकट समस्यायें मन को भले ही कुछ खिन्न बनालें किन्तु बुद्धि पर उनका प्रभाव नहीं पड़ने देना चाहिए कुमारामात्य! आप लोग मगध प्रस्थान के लिए उद्यत हो जाइए!

(अमात्यवर्ग बाहर चला जाता है। कुमारदेवी, हरिषेण बैठे रहते हैं।)

समुद्रगुप्त—प्रतिहार!

प्रतिहार—महाराज!

समुद्रगुप्त—मैं आचार्य वसुबन्धु का दर्शन करना चाहता हूं। उन्हें मैंने बाहर देखा था। कदाचित् अभी तक यहीं हों!

प्रतिहार—जो आज्ञा महाराज!

समुद्रगुप्त—(आचार्य वसुबन्धु का प्रवेश होता है। महाराज उठ कर अभिवादन करते हैं और समीप आसन पर बिठाते हैं) आचार्य, मैंने आचार्य संघमित्र के साथ शास्त्रार्थ की चर्चा मथुरा से आते समय मार्ग में सुनी!

वसुबन्धु—महाराज! कदाचित् आपने यह भी सुना होगा कि इस सत्तर वर्ष की अवस्था में मैंने रूढ़िवादी हीनयान को त्याग कर महायान-पथ ग्रहण किया है! महाराज, हीनयान की रूढ़िवादिता बौद्ध-धर्म का घातक सिद्ध होगी! यदि बौद्ध देश काल की परिस्थिति को देखकर;धार्मिक विचारों में समन्वय

की नीति नहीं अपनाते, तो यह धर्म इस देश से मिट जायगा ! महायान भक्ति प्रधान है। जनता पर भक्ति का प्रभाव पड़ चुका है ! इसे स्वीकार करना पड़ेगा ! मेरे विचार से समाज में धार्मिकता लाने का यही एक मार्ग है !

समुद्रगुप्त—आप जैसे विचार वाले आचार्य समाज का हित कर सकते हैं ! आप अपने विचारों का प्रचार मगध में कीजिए ! मगध में राजनीतिक क्रान्ति के साथ साथ धार्मिक क्रान्ति भी करनी पड़ेगी ! स्वामी शिवानन्द जी भी मगध जा रहे हैं ! आप लोग समाज का धार्मिक स्तर ऊंचा करें आचार्य ! यही मेरी कामना है।

वसुवन्धु—मैं भी यही सोच रहा था महाराज ! मुझे ज्ञात हुआ है कि पाटलीपुत्र के सन्निकट ब्रह्मण्यों और व्रात्यों में मनोमालिन्य बढ़ रहा है।

(कुछ देर रुक कर) और कुछ आदेश महाराज !

समुद्रगुप्त—रुद्रदेव की धार्मिक कट्टरता के विरुद्ध वाकाटक राज में संघों के द्वारा आन्दोलन होना चाहिए ! मेरी नीति यह है कि समस्त आर्यावर्त्त में राजनीतिक शान्ति के साथ धार्मिक ऐक्य भी स्थापित हो जाय। इस कार्य में आपका सहयोग अपेक्षित है।

वसुवन्धु—मैं प्रस्तुत हूँ महाराज !

समुद्रगुप्त—कदाचित् आपको ज्ञात होगा कि धार्मिक सहिष्णुता के कारण वाकाटकों ने पितृ देव को घेर रक्खा है ! उन्हें मुक्त करने के लिए वाकाटक और महाकान्तार प्रदेशों में आन्दोलन की आवश्यकता है। समाज को समझाना है कि न तो कट्टर शैव बन कर आर्यावर्त का कल्याण किया जा सकता है और न

कट्टर हीनयानी रह कर । हमारा देश सदा समन्वय की नीति अपनाता रहा है। इसी नीति के द्वारा हमारी संस्कृति अबाध गति से अग्रसर होती चली जा रही है । आपकी क्या सम्मति है ?

वसुबन्धु—मैं पूर्ण रीति से सहमत हूँ महाराज ! मैं उदार विचार वाले कतिपय आचार्यों को वाकाटक तथा महाकान्तार प्रदेशों में भेजता हूं !

(वसुबन्धु का प्रस्थान । उनके पीछे समुद्रगुप्त का प्रस्थान ।)

———

द्वितीय अंक

[तृतीय दृश्य]

कौशाम्बी के सन्निकट चतुर्दिक वाकाटक सेना बिखरी है। गणपति नाग सेना की देख रेख कर रहे हैं। एक स्थान पर महाकान्तार के अधिपति व्याघ्रराज अपने सेनापति से युद्ध की बातें कर रहे हैं। उसी शिविर में महाराज चन्द्रगुप्त बन्दी रूप में पड़े हैं।]

नागों के नेता नागसेन का प्रवेश होता है। उनके पीछे पीछे कुछ प्रमुख सेनानायक भी हैं। नागसेन गणपति नाग के शिविर की ओर जाते हैं।]

गणपति नाग—आइए नागवंश-शिरोमणि, कहिए क्या समाचार है! कल्याण वर्मा मगध से कितनी दूर पर हैं?

नागसेन—मालवेश, कल्याण वर्मा पाटलीपुत्र पहुँचने ही वाला है।

गणपति नाग—क्या मगध उसका स्वागत करेंगे?

नागसेन—मगध व्रात्य चन्द्रगुप्त का सदा विरोध करते रहे हैं! ब्रह्मण्यों की शक्ति वहां प्रबल हो गई है। अतएव पूर्ण आशा है कि कल्याण वर्मन का स्वागत धूम धाम से किया जायगा।

गणपति नाग—चन्द्रगुप्त का प्रभाव भी उसकी अनुपस्थिति के कारण नष्ट हो गया होगा। यह तो बताइये, मगध के महामात्य किस पक्ष में हैं?

नागसेन—हमारे पक्ष में है। गुप्तचरों से ज्ञात हुआ है कि उन्होंने हमारे पास सहायता का संदेश भी भेजा था, किन्तु बौद्धों ने

उस पत्र को मार्ग में चुरा लिया !

[व्याघ्रराज का प्रवेश, एक दूसरे को अभिवादन करते हैं।]

गणपति नाग—आइए महाराज ! कहिए चन्द्रगुप्त के प्रति जागरूक तो हैं न ! हम लोग साकेत के समीप आ पहुँचे हैं। कहीं चन्द्रगुप्त को उनके सहायक मुक्त न करलें।

व्याघ्रराज—यह कैसे सम्भव है महासेनापति ! महाकान्तार से इतनी दूर तक उन्हें वन्दी बना कर लाए हैं। उनको मुक्त कराना क्या हंसी खेल है ?

नागराज—व्याघ्रराज, चन्द्रगुप्त के जीवन को कुछ दिन तक सुरक्षित रखना अति आवश्यक है।

व्याघ्रराज—आपके आदेशानुसार ही उसको वन्दी बनाया गया। पर मैं समझ नहीं सका कि आप लोग उसे जीवित क्यों रखना चाहते हैं ?

गणपति नाग—इसमें रहस्य है। मगध वासियों को इस बात की प्रतीति किस प्रकार दिलाई जायगी कि चन्द्रगुप्त परलोक वासी हो गया।

नागराज—उद्देश्य यह है कि कल्याण वर्मन के सिंहासनासीन होने पर चन्द्रगुप्त का बध किया जाय और इसका शव सम्पूर्ण पाटलीपुत्र में फिराया जाय। इस प्रकार मगध को चन्द्रगुप्त की मृत्यु पर विश्वास हो जायगा। अन्यथा कल्याण वर्मन के विरुद्ध मागध भविष्य में आन्दोलन कर सकते हैं !

[अहिच्छत्र नरेश अच्युतनन्दी का सेना सहित प्रवेश। व्याघ्रराज, गणपति नाग और नागराज खड़े होकर स्वागत करते हैं]

गणपति नाग—विराजिए महाराज अहिच्छत्र नरेश ! कहिए सब

कुशल तो हैं।

अच्युत नन्दी—महासेनापति, आपकी कृपा कुशल प्रदान करती है।

गणपति नाग—यात्रा कैसी रही ?

अच्युत नन्दी—यात्रा सानन्द समाप्त हुई महासेनापति ! आपका सन्देश मिलते ही मैं निरन्तर चला आ रहा हूँ। मुझे मार्ग में ज्ञात हुआ कि कौशाम्बी के चारों ओर सेना एकत्रित हो रही है। मुझे आशंका हुई कि कहीं युद्ध प्रारम्भ न हो गया हो !

व्याघ्रराज—हमसे युद्ध करेगा कौन महाराज ! हम शत्रु के घर में प्रविष्ट हो गए हैं, किन्तु बैरी का कहीं पता नहीं ? हमारे अस्त्र शस्त्र रक्त के प्यासे हैं। हम उस क्षण की प्रतीक्षा में हैं जब खड्ग नाचेंगे,बाणों की फुंकार सुनाई पड़ेगी, तोमर और चक्र आकाश में तांडव करेंगे। शूल वक्षस्थल में प्रविष्ट होकर तृषा शान्त करेंगे।

अच्युत नन्दी—महाराज,मुझे गुप्तचरों से यह भी ज्ञात हुआ है कि समुद्रगुप्त की सेना दो मार्गों में बट गई है। मगध की ओर भी सेना भेजी गई है।

गणपति नाग—समुद्रगुप्त किस सेना के साथ है ?

अच्युत नन्दी—समुद्रगुप्त नीतिज्ञ पुरुष है। उसकी मन्त्रणा गुप्त होती है। उसकी कार्यप्रणाली भी विचित्र है। कह नहीं सकते वह किस सेना के साथ है।

गणपति—युद्ध नीति यही बताती है कि वह एक सेना मगध भेजे और दूसरी सेना कौशाम्बी की ओर !

व्याघ्रराज—वह मगध की ओर गया होगा। सुना है वह महत्वा-

कांक्षी है। उसे मगध के राज्यपद का प्रलोभन खींच ले गया होगा। वह अपने पिता के प्राणों की क्या चिन्ता करता है!

अच्युत नन्दी—नहीं व्याघ्रराज! मुझे ऐसा प्रतीत होता है कि साकेत की सेना यहां युद्ध करने अवश्य आवेगी।

[सेना में कोलाहल मचने लगा। "मारो काटो" की ध्वनि से सारा वायु मण्डल गूंज उठा। एक सेना नायक गणपति नाग की सेना से भागता आया।]

[वह चिल्लाने लगा अनर्थ.....अनर्थ.....]

गणपति नाग—क्या हुआ?

सैनिक—महा सेनापति, हमारे सैनिक आपस में ही लड़ने लगे।

गणपति नाग—क्यों?

सैनिक—परस्पर बात चीत हो रही थी। कुछ सैनिक कहते थे कि व्रात्यों को कुचल डालो। दूसरे कहते थे कि ब्राह्मणों को मार डालो। यही बात बढ़ते बढ़ते इतनी बढ़ गई कि दोनों वर्गों ने हथियार सभाल लिए और एक दूसरे पर टूट पड़े।

[गणपति नाग, व्याघ्रराज, अच्युत नन्दी का घटनास्थल पर पहुंचना। समुद्रगुप्त की सेना का आक्रमण। भयङ्कर युद्ध होना। विविध प्रकार के अस्त्र शस्त्रों की झङ्कार से भयङ्कर कोलाहल। रक्त की नदी बहना।]

समुद्रगुप्त—(ललकारते हुए) शत्रुओं, सावधान! आओ, वीरों के सदृश युद्ध कर लो।

[गणपति नाग,व्याघ्रराज, अच्युत नन्दी अपने अस्त्र शस्त्र संभाल कर युद्ध करते हैं। समुद्रगुप्त तीनों को विद्युत् वेग से मार कर धराशायी करता है। दोनों पक्ष की सेना में तुमुल युद्ध होता है। समुद्रगुप्त महा-

कान्तार के शिविर में प्रविष्ट होते हैं। प्रहरियों का बध करके चन्द्रगुप्त के समीप पहुंचते हैं।

शङ्ख-ध्वनि होती है]

समुद्रगुप्त—[चन्द्रगुप्त के चरणों पर गिर कर] पितृदेव !

चन्द्रगुप्त—[आश्चर्य चकित होकर] वत्स । समुद्र ! तुम यहां कैसे ! [छाती से लगाकर आंसू बहाते हुए] वत्स, शत्रुओं का दल·····कहां। कैसे। तुम ! प्रवेश !

समुद्रगुप्त—पितृदेव आपके आशीर्वाद से यहां आ पहुँचा !

चन्द्रगुप्त—शत्रुगण कहां ?

समुद्रगुप्त—परलोक गए महाराजाधिराज ! शत्रुगण अब फिर इस धरा पर नहीं आ सकेंगे।

चन्द्रगुप्त—[समुद्रगुप्त के मस्तक पर हाथ रखकर] वत्स, समुद्र ! तुम सदा विजयी बनो !

[लड़खड़ाती आवाज से] चलो समुद्र, मुझे शत्रुओं को दिखाओ ! मैं क्रूर व्याघ्रराज को देखना चाहता हूं। दुष्ट पामर ने मुझे धोखा देकर बुलाया। मुझे, विद्रोह अनार्यों को कुचलने के लिए आमन्त्रित किया, यहाँ आने पर बन्दी बना लिया। नीच अधम !

[चन्द्रगुप्त समुद्रगुप्त के साथ रणस्थल में जाता है]

चन्द्रगुप्त—वत्स, यह बताओ, तुमने ऐसे वीर योद्धाओं पर किस प्रकार विजय प्राप्त की ?

समुद्रगुप्त—पितृदेव, व्यूह-रचना-चातुर्य तथा भेदनीति के अतिरिक्त अपने शूर वीर सैनिकों की शक्ति से यह विजय प्राप्त हुई है।

[यौधेयराज, अर्जुनायन का प्रवेश]

चन्द्रगुप्त—ये वीर योद्धा कौन है ?

समुद्रगुप्त—पितृदेव, यह यौधेयराज हैं। इन्होंने शत्रुओं को पूर्व दिशा से घेर रक्खा था। यह अर्जुनायन है। इन्होंने पश्चिम दिशा को संभाला था। साकेत के सैनिक उत्तर दिशा की ओर थे। मैं चुने हुए वीरों को लेकर गणपति नाग के शिविर पर टूट पड़ा। शत्रु सेना में भगदड़ पड़ गई। सेनापतियों का बध सर्व प्रथम कर दिया। उनके मारे जाने से सैनिक हतोत्साह हो गए। इस प्रकार इन पर विजय प्राप्त हुई।

चन्द्रगुप्त—भेद नीति से क्या काम लिया ?

समुद्रगुप्त—मार्ग में महायान बौद्ध गणपति नाग की सेना में सैनिक बन गए थे। आचार्य वसुबन्धु के प्रयास से बौद्धों में कट्टर वाकाटकों के प्रति घृणा उत्पन्न हो गई थी। अवसर पाकर उन्होंने विद्रोह किया। आन्तरिक विद्रोह के कारण शत्रु की सैन्य शक्ति निर्बल हो गई। इस प्रकार हमारे सैनिक अल्प काल में ही विजयी हो गए।

चन्द्रगुप्त—मगध का क्या हाल है समुद्र !

समुद्रगुप्त—मगध पर कल्याण वर्मा आक्रमण करने वाला है पितृदेव !

चन्द्रगुप्त—क्या उसकी रक्षा का कोई यत्न नहीं किया गया ?

समुद्रगुप्त—बालाधिकृत के साथ कविराज हरिषेण को भेज दिया है।

चन्द्रगुप्त—क्या वे लोग मगध के शत्रुओं को निकालने में समर्थ होंगे ? यदि मगध हाथ से चला गया तो···

समुद्रगुप्त—मगध को हस्तगत करने के लिए भाई कच वङ्ग से आ गए होंगे। अतएव मुझे उसकी अधिक चिन्ता नहीं महाराजाधिराज!

चन्द्रगुप्त—कच की माता कहां हैं?

समुद्रगुप्त—साकेत में कुछ दिन तक रहीं किन्तु अब...

चन्द्रगुप्त—अब कहां चली गईं?

समुद्रगुप्त—निश्चय रूप से नहीं कहा जा सकता। सम्भवतः कल्याण वर्मा के साथ सन्धि करके मगध पर अधिकार प्राप्त करने की अभिलाषा उन्हें पाटलीपुत्र ले गई।

चन्द्रगुप्त—ऐसी मूर्खता! क्या विजयी होने पर कल्याण वर्मा कच को मगध का राज्य सौंप देगा? समुद्र आज तुम्हारा शौर्य देख कर मुझे विश्वास हो गया कि तुम एक दिन सार्वभौम सम्राट् बनोगे।

समुद्रगुप्त—आपका आशीर्वाद सफल मनोरथ का दाता है पितृदेव किन्तु मुझे सार्वभौम सम्राट् बनने की अभिलाषा नहीं। जगत में सर्वत्र सुख शान्ति स्थापित हो जाए पितृदेव यही इच्छा है।

यौधेयराज—[चन्द्रगुप्त की ओर देखते हुए] महाराजाधिराज, यह सर्वगुण सम्पन्न युवक भारतवर्ष में एक बार फिर रामराज्य स्थापित करेगा। हमारा ऐसा विश्वास है।

[एक सैनिक का प्रवेश। स्त्रियों का आर्त्तस्वर सुनाई पड़ता है]

सैनिक—[प्रणाम करते हुए] महाराज!

समुद्रगुप्त—क्या है वीर?

सैनिक—शत्रु-शिविर में स्त्रियों का आवास था। वे स्त्रियां करुण

क्रन्दन कर रही थीं। हमने बहुत रोका पर वे रोती ही रहीं।

समुद्रगुप्त—क्या कहती हैं ?

सैनिक—महाराज, वह आप से ही कुछ कहना चाहती हैं। हमें कुछ नहीं बतातीं।

समुद्रगुप्त—किसी सैनिक ने किसी प्रकार का अशिष्टाचार तो नहीं किया।

सैनिक—नहीं महाराज !

[सेनापति का प्रवेश]

समुद्रगुप्त—सेनापति, स्त्रियों का किसी प्रकार निरादर तो नहीं हुआ।

सेनापति—नहीं महाराज, आपकी आज्ञा का उल्लंघन कोई भी सैनिक स्वप्न में नहीं करना चाहता। महाराज, शिविर वासिनी स्त्रियाँ आपके दर्शनार्थ आई हैं।

समुद्रगुप्त—(वेग से उठकर) कहां हैं ? मुझे वहां ले चलो।

सेनापति—महाराज, वे यहीं आ गई हैं।

[अच्युत नन्दी की राजमहिषी का सहचरियों सहित प्रवेश। सिन्दूर विन्दु धुला हुआ। बाल खुले हुए हैं। हाथ में सौभाग्य चिन्ह सहित]

समुद्रगुप्त—(करबद्ध प्रणाम करते हुए) देवी आपने क्यों कष्ट किया ? (सेनापति की ओर देखते हुए) आपका परिचय सेनापति !

सेनापति—महाराज आप अच्युत नन्दी की राज महिषी हैं। सहचरियों से इतना ही ज्ञात हुआ है।

समुद्रगुप्त—देवी, हमें हार्दिक दुख है कि आपको वैधव्य-वेदना सहनी पड़ी। अब आप जहां रहना चाहें, आपको

पहुँचा दिया जाय। आप जो सहायता चाहें, हम करने को तैयार हैं।

महारानी—(क्रुद्ध होकर) मैं आपसे कोई सहायता नहीं चाहती। आप मुझे मुक्त कर दीजिए। हम जहाँ चाहेंगी, जायेंगी।

समुद्रगुप्त—आप पूर्णतया स्वतंत्र हैं देवी! यदि आप मगध में अपने दामाद कल्याण वर्मा के पास जाना चाहें तो उसकी व्यवस्था भी की जा सकती है।

महारानी—मैं इसकी व्यवस्था स्वतः कर लूंगी। मैं किसी से भयभीत होने वाली स्त्री नहीं।

समुद्रगुप्त—महारानी, आर्यावर्त की प्रत्येक नारी आपकी तरह निर्भीक होती, तो देश पराधीनता का दुख कभी न पाता!

महारानी—तुम जैसे निष्ठुर स्वार्थी वीर योद्धा होंगे तो नारी को मेरे समान निर्भीक बनना ही होगा।

समुद्रगुप्त—महारानी, विश्वास मानिए मैंने राज्य-प्रलोभन के कारण नहीं प्रत्युत अपने पूज्य पिता को शत्रुओं से मुक्त कराने के लिए यहां आया था।

महारानी—यदि मुक्त ही कराना उद्देश्य था तो इन वीरों का वध क्यों किया? क्या उन्हें बन्दी बनाकर अपने पिता को मुक्त नहीं करा सकते थे?

समुद्रगुप्त—मैं भी यही चाहता था, किन्तु युद्धक्षेत्र में उन्होंने मुझ पर आक्रमण किया। अपनी रक्षा के लिए उनको धराशायी करना अनिवार्य हो गया!

[महारानी के नेत्रों से अश्रुधारा बहती है]

समुद्रगुप्त—महारानी, आप वीर नारी हैं धैर्य धारण कीजिए।

सैनिक युद्ध क्षेत्र में अमर बन जाते हैं। विजयी बनकर राज्य भोगते हैं। हमें कृष्ण का यह उपदेश भूल न जाना चाहिए !

महारानी—राज्य के लोभी समुद्र, मुझे उपदेश देते हो !

समुद्रगुप्त—महारानी, मैं पुनः निवेदन करूंगा कि मैंने यह युद्ध राज्य के लोभ वश नहीं, प्रत्युत कर्तव्य कर्म समझ कर किया है।

महारानी—अगर तुम्हें राज्य का लोभ नहीं तो कल्याण वर्मन को क्यों नहीं राज्य करने देते।

समुद्रगुप्त—महारानी, राज्य किसी के देने से नहीं मिलता है। यदि मिल भी जाय तो स्थिर नहीं रह सकता। राजलक्ष्मी समर्थवान् व्यक्ति के पास उसके गुणों पर रीझ कर ही निवास करती है। जहां सद्‌गुणों का अभाव हुआ, राजलक्ष्मी प्रयाण कर जाती है।

महारानी—मुझे उपदेश न दो समुद्र ! एक बात बोलो। यदि तुम्हें राज का प्रलोभन नही तो कल्याण बर्मन को दे दो।

समुद्रगुप्त—मैं महारानी, किसी को कोई वस्तु दी तब जाती है, जब उसके पास हो। मगध का राज मेरे हाथ में है कहां कि कल्याण वर्मन को दूं।

महारानी—मैं समझ गई तुम मेरे पाखंडी हो ! मैं तुमसे कुछ नहीं कहना चाहती।

[क्रुद्ध होकर बाहर चली जाती है]

समुद्रगुप्त—सेनापति !

सेनापति—राजन् !

समुद्रगुप्त—महारानी को सकुशल मगध पहुँचाने की व्यवस्था करो।

सेनापति—जो आज्ञा राजन्!

समुद्रगुप्त—अब हम लोग भविष्य के कार्यक्रम की योजना बनायेंगे [यौधेयराज अर्जुनायन महाराज चन्द्रगुप्त, कुमारामात्य, बालाधिकरण आदि मंत्रणा करते हैं। महाराज चन्द्रगुप्त उच्च स्थान पर बैठ जाते हैं। समुद्रगुप्त उनके पास है।]

चन्द्रगुप्त—वीर योद्धाओं, आप लोगों से मुझे कुछ विशेष बात कहनी है।

यौधेयराज अर्जुनायन—कहिए महाराज अवश्य कहिए।

चन्द्रगुप्त—हमारी भारतीय पद्धति है कि पुत्र के योग्य हो जाने पर राज्य का कार्य भार उसके हाथों में सौंप कर राजा को वाणप्रस्थ ग्रहण कर लेना चाहिए। आप लोग इसे जानते ही हैं।

यौधेयराज—हां महाराज! यह पद्धति अनादि काल से चली आ रही है और है भी अत्यन्त उपयोगी।

चन्द्रगुप्त—मैं कुछ दिनों से इस पर विचार कर रहा था। मैं आज आपके सम्मुख इसका राज्याभिषेक करना चाहता हूँ। मैं यह भी स्पष्ट कर देना चाहता हूं कि मैं राज्यभार कच को समर्पित करने के पक्ष में था। मैं समुद्र की "न खरो न च भूयसा मृदुः" की नीति के विरुद्ध था। किन्तु मैं देखता हूँ कि समुद्र की नीति सफल हो रही है। इस कारण मैं आज आपके सम्मुख इसका राज्याभिषेक करना चाहता हूं। किन्तु राज्याभिषेक की सामग्री यहां कहाँ मिलेगी?

यौधेयराज—महाराज, राजा समुद्र जैसे वीरों का राज्याभिषेक युद्ध क्षेत्र में रक्त से होता है।

अर्जुनायन—शत्रुओं का रक्त प्रवाहित हो रहा है महाराज ! इससे क्यों न अभिषेक हो ?

यौधेयराज—समुद्र के शरीर पर अगणित क्षत हैं महाराज ! समुद्र के रक्त से ही समुद्र का राज्याभिषेक होगा।

[समुद्र वर्म उतारता है। शरीर पर अनेक घाव हैं, जहां से रक्त निकलता है।]

चन्द्रगुप्त—(समुद्र के शरीर से रक्त लेकर) वीर समुद्र, आज मैं तुम्हारा अभिषेक करता हूँ और महाराज की उपाधि प्रदान करता हूं।

[शङ्ख ध्वनि होती है। साथ ही साथ विविध वाद्य-ध्वनि से आकाश मण्डल गूंज उठता है। सैनिक एकत्रित होते हैं। महाराज समुद्रगुप्त की जय जय कार होती है।]

तृतीय अंक

[प्रथम दृश्य]

[एरण के विस्तृत भूभाग में दक्षिणापथ के प्रायः समस्त राजा एकत्रित है। वाकाटक महाराज रुद्रदेव सबका नेतृत्व कर रहे हैं। पल्लव राज विष्णु गोप, वेङ्गी नरेश हस्ति वर्मा, कलिंगराज महेन्द्र, देवराष्ट्र नृपति कुबेर, एरंडपल्लव के राजा दमन अपने अपने शिविरों में सेना का निरीक्षण कर रहे हैं।

इस स्कन्धावार के सम्मुख कुछ दूरी पर महाराज समुद्रगुप्त का शिविर है। महाराज के स्कन्धावार में महाकान्तार, अर्जुनायन, अहिच्छत्र, साकेत के सैनिक हैं। कई दिनों से युद्ध हो रहा है। दोनों पक्ष वाले पूर्ण शक्ति सहित, प्रातःकाल युद्ध क्षेत्र में जाते हैं, और सन्ध्या तक घमासान युद्ध होता है।

एक दिन महाराज समुद्रगुप्त सन्ध्या समय ईश्वर का ध्यान कर रहे हैं। उनके साथ कई सेनापति भी सन्ध्या-पूजन कर रहे हैं। एरण का विशाल मैदान ज्योत्स्ना में चमक रहा है। प्रकृति के सुन्दर प्रांगण में पुरुष-प्रकृति की दार्शनिक समस्या पर विचार करते २ समुद्रगुप्त युद्ध की चिन्ता विस्मृत कर चुके थे। सहसा दौवारिक का प्रवेश हुआ]

दौवारिक—महाराज, मगध से कुछ सज्जन मिलने आए हैं।

[समुद्रगुप्त का ध्यान टूट जाता है। वह दौवारिक की ओर कुछ क्षणों तक देखकर बोले]

समुद्रगुप्त—उन्हें सादर यहां ले आओ।

[कविराज हरीषेण, महाबलाधिकृत तथा कतिपय सेनापतियों

और मागधों का प्रवेश होता है। सब महाराज को प्रणाम करते हैं]

समुद्रगुप्त—कविराज, आप लोग आ गए! मैं कई दिनों से प्रतीक्षा कर रहा था। मैंने कोशाम्बी से कई दूत भेजे। आप लोगों ने इतना विलम्ब क्यों किया?

हरिषेण—महाराज, कोशाम्बी विजय का समाचार सुनते ही स्वामी शिवानन्द जी मगध से चल पड़े। हम लोगों को मागधों पर इस विजय का प्रभाव बताने के लिए छोड़ आए!

समुद्रगुप्त—मगध पर कौशाम्बी युद्ध की क्या प्रतिक्रिया हुई?

बलाधिकृत—युद्ध में विजय प्राप्ति का प्रभाव, हमारे पक्ष में बहुत ही अच्छा पड़ा। उससे भी अधिक प्रभाव आपकी उदारता के कारण हुआ है।

हरिषेण—आपने, स्वर्गीय अच्युत नन्दी की राजमहिषी को, सम्मान पूर्वक कल्याण वर्मन के पास भेज दिया। इस समाचार को सुनकर आपके विपक्षी भी मित्र बन गए। एक स्त्री का सम्मान करके आपने स्त्री जाति का सम्मान किया है महाराज।

समुद्रगुप्त—क्यों कविराज, मगध में जाकर तुमने चाटुकारिता भी सीख ली क्या?

हरिषेण—अपने महाराज से कुछ गुण तो सीखना ही था।

समुद्रगुप्त—मेरी प्रशंसा करने से क्या पाओगे कविराज। इस अवस्था में तुम्हें किसी अन्य की चाटुकारिता करनी चाहिए। अस्तु! यह तो बताओ, मगध का क्या नया समाचार है?

हरिषेण—महाराज, मगध का सुखद समाचार है। यह समाचार और भी आनन्ददायी होता, यदि आप कौशाम्बी विजय के

उपरान्त मगध आ गए होते। कच और कल्याण वर्मा परस्पर युद्ध की तैयारी कर रहे थे। मगध-विजय सरल था महाराज!

कुमारामात्य—महाराज, हम लोग आपकी नीति समझ नहीं पाए। आपने मगध-विजय का स्वर्ण अवसर नष्ट कर दिया।

समुद्रगुप्त—कुमारामात्य, मगध-विजय के लिए अब प्रत्येक क्षण स्वर्ण अवसर है।

कुमारामात्य—वह कैसे महाराज?

समुद्रगुप्त—यह राजनीति का साधारण सिद्धान्त है कि दो राज्य-लोलुप व्यक्ति तभी तक संयुक्त रहते हैं, जब तक राज्य प्राप्ति नहीं हो जाती। राज मिलने पर उनमें कलह अनिवार्य है। मैं जानता था कि कच और कल्याण वर्मा में युद्ध छिड़ेगा। मेरा यह भी विश्वास है कि दोनों मुझसे सहायता की प्रार्थना करेंगे।

कुमारामात्य—किन्तु महाराज, आप उत्तरापथ विजय करके दक्षिण आते तो कितना अच्छा हुआ होता।

समुद्रगुप्त—अमात्य, आपकी यह नीति लाभदायक नहीं प्रतीत होती। मेरी नीति लाभदायक होगी या हानिकारक, इसका निर्णय भविष्य करेगा; किन्तु आप ही सोचिए। दक्षिण में वाकाटकों की शक्ति पूर्ववत् संचित थी। मगध प्रयाण काल में वाकाटक रुद्रसेन बघेलखंड की ओर से, और दक्षिण के अधीनस्थ पल्लवराज दूसरी ओर से एक साथ आक्रमण करते, तो हमारी सेना किसी प्रकार मुक्त होने का मार्ग न पाती। अतएव आवश्यक था कि वाकाटकों की शक्ति को कुचलने के लिए उसके सहायक राज्यों से ग्रहण, मोक्ष, आत्म

निवेदन, प्रत्यर्पण आदि नीति के द्वारा सन्धि कर ली जाय।

कुमारामात्य—महाराज, इतनी दूरदर्शिता तो हम में नहीं थी। हम नित्य प्रति आपकी नीति का खंडन किया करते थे।

[दौवारिक का प्रवेश]

दौवारिक—महाराज, योगिराज पधारे हैं।

[समुद्रगुप्त तथा समस्त उपस्थित जन खड़े हो जाते हैं। महाराज आगे बढ़कर योगिराज का स्वागत करते हैं। उनके चरणों पर मस्तक रखते हैं। योगिराज उन्हें उठाकर कंठ से लगा लेते है।]

योगिराज—सदा विजयी बनो महाराज!

[सब लोग आसन पर विराजमान हो जाते हैं।]

समुद्रगुप्त—योगिराज। दर्शन की उत्कंठा अत्यन्त तीव्र हो रही थी। कितने दिन बीत गये, आपका साक्षात्कार हुआ ही नहीं। आपने मुझे ऐसे कार्य में संलग्न कर दिया कि आपके उपदेशों से भी वंचित होना पड़ता है। इस कार्य के भार से कभी कभी वितृष्णा हो जाती है योगिराज। यह कैसा कार्य आपने मुझे........

योगिराज—समुद्र, तुम्हारा कार्य महान् है। समस्त भारत को एकता के सूत्र में ग्रथित करना साधारण कार्य नहीं है समुद्र। इसे तुम्हारे जैसा कोई विरला ही पुण्यात्मा सम्पन्न कर सकता है।

समुद्रगुप्त—प्रतिदिन प्राणियों के बध से रक्त स्नान में क्या पवित्रता है योगिराज! हिंसा! हिंसा! सर्वत्र हिंसा।

योगिराज—पवित्र हृदय से की हुई हिंसा भी पुण्य बन जाती है समुद्र! और भीरु हृदय से की हुई अहिंसा भी पाप है।

तुम गीता के उपदेश भूल जाते हो। कभी २ तुम्हें अब भी अर्जुन की तरह भ्रम हो जाता है।

समुद्रगुप्त—आपके दर्शनाभाव से भ्रमात्मक विचार उत्पन्न होने लगते हैं योगिराज !

योगिराज—समुद्र, युद्ध की प्रगति कैसी है ? तुम्हारे सैनिक निराश तो नहीं हो रहे हैं ?

समुद्रगुप्त—स्वामिन्, अभी तक हमारे सैनिक विजय की आशा कर रहे हैं। बलाधिकृत के साथ नवीन गुल्म भी आ गया है। सुना है रुद्रदेव सन्धि करने को भी लालायित हैं।

योगिराज—सन्धि करना सर्वोत्तम होता है समुद्र, किन्तु सन्धि की शर्तों का अनुकूल-प्रतिकूल होना अपनी शक्ति पर निर्भर होता है। यह तो बताओ सन्धिविग्रहिक कहां हैं ? उन्हें कैसी सफलता मिल रही है ?

सन्धिविग्रहिक—स्वामिन्, मैंने दक्षिणापथ के तीन राजाओं को सन्धि के लिए प्रस्तुत कर लिया है। वे कदाचित् शत्रु से विलग हो जायेंगे।

समुद्रगुप्त—योगिराज, यह युद्ध कब तक इसी प्रकार चलेगा ?

योगिराज—क्या व्याकुल हो गए समुद्र ! अभी तुम्हें उत्तरापथ में कितने युद्ध करने हैं। तुम्हें तो जीवन भर युद्ध ही करना है !

समुद्रगुप्त—स्वामिन् !

योगिराज—समुद्र, यह युद्ध अब समाप्त प्राय है। अब चिन्तित न हो।

समुद्रगुप्त—किस प्रकार योगिराज ?

योगिराज—मैं कई दिनों से दक्षिणापथ आया हूं।

समुद्रगुप्त—आप रहे कहां ? मैं नित्य दर्शन को व्याकुल था ! मुझे सूचना भी न मिली !

योगिराज—मुझे ककुत्सराज ने एक आश्रम में ठहरा लिया, समुद्र !

समुद्रगुप्त—वहाँ क्यों ठहरे स्वामिन् !

योगिराज—इसीलिए कि कहीं विजयोन्मत्त समुद्र मुझ पर भी शासन न करने लगे !

समुद्रगुप्त—योगिराज ! [नत मस्तक हो जाता है आकृति म्लान हो जाती है]

योगिराज—समुद्र ! महाराज ककुत्सराज तुम्हारे शौर्य पर मुग्ध हैं। उन्होंने दक्षिणा पथ के समस्त राजाओं को एक परिषद् में निमंत्रित किया। मुझे भी आमंत्रण मिला था।

समुद्रगुप्त—यह परिषद् किस लिए बुलाया गया था ?

योगिराज—सन्धि चर्चा के लिए ! दक्षिणापथ के राजाओं को भ्रम था कि समुद्रगुप्त सबको राज-च्युत करके स्वयं शासन करना चाहता है।

समुद्रगुप्त—इतना भ्रम फैलाया गया है योगिराज !

योगिराज—शत्रुगण नाना प्रकार से भ्रम फैलाते ही हैं समुद्र ! उसका निवारण करना भी तुम्हारा कार्य है।

समुद्रगुप्त—ककुत्सराज की क्या सम्मति है योगिराज ? वह किस पक्ष में हैं ?

योगिराज—यह तो तुम जानते ही हो कि उन्होंने किसी पक्ष में लड़ना स्वीकार नहीं किया।

समुद्रगुप्त—जानता हूं स्वामिन् !

योगिराज—उन्हें भी तुम्हारे प्रति भ्रम था। मैंने सारी परिस्थिति समझाई। तब वह सन्धि के लिए प्रयत्नशील हुए। वह अब आते ही होंगे। मैंने उन्हें यही समय दिया है। वह सन्धि के लिए रुद्रदेव, महेन्द्र आदि के साथ आते ही होंगे।

दौवारिक—महाराज, ककुत्सराज आपसे मिलना चाहते हैं।

[समुद्रगुप्त अमात्यवर्ग के साथ आगे जाकर स्वागत करते हैं। सब लोग यथायोग्य स्थानों पर बिठाये जाते हैं।]

योगिराज—राजन्यवर्ग, इस समय आप लोगों की यह मन्त्रणा भारतीय इतिहास की अत्यन्त महत्व पूर्ण घटना होगी। आज उत्तरापथ और दक्षिणापथ का संयोग होने जा रहा है। इस संयुक्त शक्ति से भारत एकता के सूत्र में ग्रथित होगा। व्रात्यों ब्रह्मण्यों के सम्मिलन से देश में अपूर्व शक्ति उत्पन्न होगी। इस नवीन बल के द्वारा पश्चिमोत्तर से निरन्तर आक्रमण करने वाले विधर्मियों का सामना सरलता पूर्वक हो सकेगा। इस प्रकार भारत देश स्वतः सुख शान्ति पूर्वक जीवन विताते हुए जगत को शान्त और सुखी बनाने में समर्थ होगा। [महाराज कुकुत्सराज की ओर देखकर] महाराज, मुझे केवल इतना ही कहना था। अब आप अपना कार्य प्रारम्भ कीजिये।

ककुत्सराज—दक्षिणापथ के राजन्य वर्ग, आप लोग समुद्रगुप्त के आक्रमण का उद्देश्य पूछना चाहें तो पूछ लें।

रुद्रदेव—महाराज इस युद्ध का उद्देश्य अपना राजकीय प्रभुत्व स्थापित करने के अतिरिक्त भी कुछ है। यदि है तो क्या ?

समुद्रगुप्त—राजन्य वर्ग, राजकीय सत्ता की स्थापना साधन है न कि साध्य।

वासुदेव—साध्य क्या है महाराज ?

समुद्रगुप्त—भारतमाता के समस्त अस्त-व्यस्त अवयवों को संयुक्त करके इस प्रकार पुष्ट बनाना, जिससे माता अपनी सन्तान का पालन, और अतिथियों का सत्कार सम्मानपूर्वक कर सके।

विष्णुगोप—महाराज, हमें आशंका है कि आप भारतमाता के प्रत्येक अंग को पुष्ट करने के बहाने हमें जकड़ना चाहते हैं। आप जानते हैं कि बन्धन किसी को प्रिय नहीं होता। सभी स्वतन्त्रता के इच्छुक हैं।

समुद्रगुप्त—आश्चर्य है! मेरे प्रति आप लोगों की ऐसी भावना कैसे बन गई! मैं एक पवित्र उद्देश्य लेकर आपके पास आया हूँ।

रुद्रदेव—उद्देश्य कितना ही पवित्र हो, किन्तु यदि उसकी पूर्ति-प्रणाली पवित्र न हो तो समस्त कार्य अपवित्र बन जाता है। आपने वाकाटकों का राज्य अपहरण किया है। आप साम्राज्य-वादी हैं। हम इसे किस प्रकार सहन कर सकते हैं। भारत माता के ध्वस्त अवयवों को संयुक्त करने की क्या यही पद्धति है कि एक अंग बलिष्ठ करने के लिए अन्यान्य अंगों को नष्ट कर दिया जाय।

समुद्रगुप्त—मैं किसी भी अंग को नष्ट नहीं करना चाहता महाराज!

विष्णुगोप—तब तो आप चाहते कुछ हैं और करते कुछ हैं।

समुद्रगुप्त—कदाचित् जो मैं चाहता हूं वही आप लोग भी चाहते हैं। केवल सम्पादन शैली में अन्तर है। मेरा यह विश्वास है कि जिस प्रकार शरीर के प्रत्येक अंग मस्तिष्क का आदेश

अनायास पालन करके प्रसन्न रहते हैं, उसी प्रकार भारत के राजा महाराजा, केन्द्रीय शक्ति का अनुशासन प्रसन्नता पूर्वक मान कर सुखी और सन्तुष्ट बन सकते हैं, क्या आप लोग मेरे विचार से सहमत नहीं ?

रुद्रदेव—हम लोग सहमत हैं महाराज, किन्तु मस्तिष्क को प्रत्येक अंग समान रूप से प्रिय होता है। उत्तरापथ ने दक्षिणापथ को समान पद देने का कभी प्रयास नहीं किया।

समुद्रगुप्त—मैं राजन्यवर्ग को बता देना चाहता हूं, कि मैं उसी निमित्त आपके द्वार पर अतिथि रूप में आया हूं।

रुद्रदेव—यदि आप हमारे साथ समानता का बर्ताव करते हैं तो हम लोग आपको महाराजाधिराज मानने को प्रस्तुत हैं; किन्तु हमारी कुछ शर्तें होंगी।

समुद्रगुप्त—शर्तें क्या हैं ?

रुद्रदेव—हमने महाराज ककुत्सराज को बता दी हैं। वही हमारे मध्यस्थ होंगे।

समुद्रगुप्त—कहिए महाराज, शर्तें क्या हैं ?

ककुत्सराज—प्रथम शर्त है कि हमें राज्य के आन्तरिक शासन में स्वतंत्रता होगी।

समुद्रगुप्त—स्वीकार है, किन्तु परराष्ट्र नीति केन्द्रीय शासन के हाथ में होगी।

रुद्रदेव—हमें स्वीकार है।

ककुत्सराज—दूसरी शर्त है कि सिक्कों पर हमारे चिन्ह स्वरूप गंगा जमुना की मूर्ति होगी।

समुद्रगुप्त—स्वीकार ! तीसरी शर्त ?

ककुत्सराज—मगध की भाषा राजभाषा न बनेगी।

समुद्रगुप्त—तब राजभाषा क्या होगी? इसका निर्णय किस प्रकार हो?

रुद्रदेव—भारशिवों और वाकाटकों ने शताब्दियों तक इस विषय में सतत उद्योग किया है। उन्होंने भारत के अधिकांश भागों में संस्कृत का इतना प्रचार कर दिया है कि अब संस्कृत को राज भाषा बनाने में अधिक असुविधा न होगी।

[समुद्रगुप्त योगिराज की ओर देखते हुए मौन धारण कर लेते हैं।]

योगिराज—महाराज, भारतीय संस्कृति को नवजीवन प्रदान करने के लिए संस्कृत को प्रोत्साहन देना न्याय ही होगा। समस्त भारत को एकता के सूत्र में बांधने वाली संस्कृत भाषा ही हो सकती है।

समुद्रगुप्त—[रुद्रदेव की ओर देखते हुए] मुझे स्वीकार है। और कोई शर्त?

रुद्रदेव—व्रात्यों ने ब्राह्मणों का विरोध करने के लिए विदेशियों को बारबार आमन्त्रित किया है। अतएव व्रात्यों का उन्मूलन करना केन्द्र का प्रधान ध्येय होगा।

समुद्रगुप्त—महाराज, मैं इसे मानने में नितान्त असमर्थ हूं। किसी जाति या समाज का उन्मूलन साम्राज्य का ध्येय नहीं हो सकता!

रुद्रदेव—क्यों? व्रात्यों के कारण हम विदेशियों से पराभूत किए गए हैं। इन्हें भारत में स्थान देना स्वयं पैर में कुठाराघात करना है। इन्हें निर्मूल करना ही होगा। इस कार्य में घोर

निष्ठुरता भी क्षम्य है।

समुद्रगुप्त—राजन्यवर्ग, मेरी नीति इस सिद्धान्त के प्रतिकूल है। मैं तो "न खरो न च भूयसा मृदुः" वाली नीति का समर्थक हूं। मैं व्रात्यों को निर्वासित करने का पक्षपाती नहीं। मेरा विचार है कि ब्रह्मण्यों की सदाशयता और ब्रह्म विद्या की मनोहरिता द्वारा उन्हें पूर्णरीति से अपनी प्राचीन संस्कृति में रंगा जा सकता है। इसी में सबका कल्याण है। इस प्रकार केन्द्रीय शासन न्याय पर निर्भर होगा न कि पक्षपात पर!

[रुद्रदेव, विष्णुगोप, हस्ति वर्मा, महेन्द्र, कुवेर और दमन का परस्पर विचार विनिमय करना]

ककुत्सराज—योगिराज, आप ही इस समस्या को सुलझाने में समर्थ होंगे। आप अपना मत प्रकट करिए।

योगिराज—राजन्यवर्ग, महाराज समुद्रगुप्त को अपनी नीति कार्यान्वित करने का अवसर दीजिए। यदि इसका परिणाम अनुकूल न हुआ तो दूसरी नीति का प्रयोग फिर भी किया जा सकेगा।

[दक्षिणापथके राजा मौन धारण किए बैठे हैं]

योगिराज—महाराज समुद्रगुप्त, मैं देखता हूँ कि आप सब लोगों का ध्येय एक है। नीति में ही वैषम्य है। अब मत-भेद विशेष नहीं है। अतएव दोनों पक्षों को इस विषय पर सोचने का अवकाश मिलने से समस्या अवश्य सुलझ जायगी।

राजन्यवर्ग—स्वीकार है योगिराज!

समुद्रगुप्त—जो आज्ञा योगिराज!

[रुद्रदेव की ओर देखकर] और कोई शर्त है राजन्?

रुद्रदेव—वाकाटकों ने अश्वमेध की प्रथा को पुनर्जीवित किया है। हमारी शर्त है कि आप इस प्रथा का पालन करके चक्रवर्ती राज्य स्थापित करें।

समुद्रगुप्त—स्वीकार है महाराज ! और कोई शर्त ?

रुद्रदेव—अब अन्तिम शर्त अवशिष्ट रह गई है महाराज !

[मुख पर हास्य रेखा]

समुद्रगुप्त—वह भी सुनाइए।

रुद्रदेव—हम आपको सम्राट् बनाने को प्रस्तुत हैं, किन्तु साम्राज्ञी दक्षिणपथ की बालिका होगी।

[समुद्रगुप्त गम्भीर चिन्ता में पड़ जाते हैं। मौन धारण कर लेते हैं। योगिराज रहस्य समझ जाते हैं। मन्त्रणा भवन में निस्तब्धता छा जाती है।]

योगिराज—राजन्यवर्ग, एकान्त में इस विषय का चिन्तन करने के लिए महाराज को अवकाश मिलना चाहिए। अन्य कोई शर्त ?

रुद्रदेव—बस योगिराज ! आशा है कि आपकी तपस्या उत्तरापथ और दक्षिणापथ में ऐक्य स्थापित करेगी।

योगिराज—राजन्यवर्ग, भारत के ये दोनों भाग इसके फेफड़े हैं। माता का मस्तक सीमान्त सदा विदेशियों से आक्रमित होता है। उसकी रक्षा के लिए दोनों फेफड़ों का शुद्ध रक्त द्वारा मस्तिष्क को निर्मल रखना अनिवार्य है।

रुद्रदेव—हम आपका आदेश स्वीकार करते हैं योगिराज !

[राजन्यवर्ग का प्रस्थान।]

[ककुत्सराज जाना चाहते हैं]

योगिराज—ठहरिए ! आप मध्यस्थ हैं। आप कहां चले ? महाराज से निर्णय कराते जाइये।

[ककुत्सराज रुक जाते हैं]

ककुत्सराज—महाराज ! आपने जब से दक्षिणापथ में पदार्पण किया है, मेरी कन्या दत्तदेवी आपके शौर्य-यश को बड़े चाव से सुनती रहती है। उसने आपके कार्यों के अनुसार आपके कई काल्पनिक चित्र बनाए हैं। इस प्रकार उसका आकर्षण आपके प्रति अत्यधिक हो गया है। हमारा नम्र निवेदन है कि आप मेरी कन्या को पत्नी रूप में स्वीकार करें !

[समुद्रगुप्त मौन धारण कर लेते हैं।]

योगिराज—कहो महाराज, क्या करना चाहते हो ?

समुद्रगुप्त—योगिराज ! महाराज यौधेयराज की कन्या मालती का क्या होगा ?

योगिराज—महाराज, मालती की चिन्ता आपको नहीं करनी है। उसने अपना पथ निर्धारित कर लिया।

समुद्रगुप्त—वह किस प्रकार योगिराज ?

योगिराज—वह भिक्षुणी बन गई।

समुद्रगुप्त—(आश्चर्य से) क्या मालती भिक्षुणी बन गई !

योगिराज—हाँ महाराज !

[समुद्रगुप्त मौन धारण कर लेते हैं।]

[योगिराज और ककुत्सराज अन्यत्र चले जाते हैं। समुद्रगुप्त चिन्ता में निमग्न हो जाता है। कभी उठकर टहलने लगता है, कभी कभी बैठ जाता है। थोड़ी देर पश्चात् वीणा लेकर गाने लगता है।]

[हरिषेण का प्रवेश]

हरिषेण—महाराज, इतनी व्याकुलता क्यों? आज उल्लास का अवसर है न कि विषाद का! आपके जीवन का लक्ष्य समीप आ गया है। आज उत्तरापथ और दक्षिणापथ का सम्मिलन हो रहा है। आप इतने विशाल साम्राज्य के अधिपति बने हैं! इस प्रकार चिन्ता करने का कारण?

समुद्रगुप्त—कविराज, आज द्वन्द्व मस्तिष्क से भागकर हृदय में आसीन हो गया। कर्त्तव्य पालन की निष्ठुरता ने मालती सी कोमल कलिका को कुचल दिया। वह बेचारी भिक्षुणी बन गई।

हरिषेण—(विस्मय से) क्या भिक्षुणी बन गई! वह क्यों?

समुद्रगुप्त—मुझसे निराश होकर! मैंने एक बालिका का जीवन नष्ट किया।

हरिषेण—आपने क्या किया? किन्तु भिक्षुणी कब बनी?

समुद्रगुप्त—कौशाम्बी विजय तक मेरी प्रतीक्षा करती रही! उसे विश्वास था कि मैं विजयोपरान्त उसकी सुधि लूंगा; किन्तु युद्ध की तुमुल ध्वनि में हृदय कोकिल की मृदुल पुकार को सुनकर भी अनसुनी करता रहा। बेचारी मालती की प्रेम कलिका विकसित होने के पूर्व ही मुरझा गई! कविराज!

हरिषेण—महाराज!

समुद्रगुप्त—आचार्य वसुबन्धु को पत्र भेजो। उनसे निवेदन करना है कि आप शाकल के संघाराम में यौधेय कुमारी मालती की देख रेख करें।

हरिषेण—जो आज्ञा महाराज ! किन्तु एक स्त्री के कारण आप इतने व्याकुल······

समुद्रगुप्त—कविराज ! आज हृदय में जो झंझावात चल रहा है उसे कैसे दिखाऊं ! प्रेम का अंकुर अचेतनावस्था में इस सीमा तक बढ़ जायगा इसका ध्यान नहीं था। चित्त में आता है कि मैं भी इस कार्य भार को त्यागकर भिक्षु बन जाऊं और शाकल में शान्ति पूर्वक शेष जीवन व्यतीत करूं !

[योगिराज का प्रवेश]

योगिराज—समुद्र ! क्या तुमने दत्तदेवी से विवाह के सम्बन्ध में कुछ सोचा ?

समुद्रगुप्त—इस समय मेरी बुद्धि कुंठित हो रही है योगिराज !

योगिराज—क्यों कविराज, तुम्हारी क्या सम्मति है ? महाराज की आन्तरिक इच्छा क्या है ?

हरिषेण—महाराज इस समय बिचार-विमूढ़ हो रहे हैं योगिराज, मैं तो उन्हें समझा रहा था।

योगिराज—समुद्र, यही तुम्हारी परीक्षा का समय है। राम ने जन-रंजन के लिए सती साध्वी सीता को राज्य से निर्वासित किया था।

तुम्हें भारत-कल्याण के लिए मालती को हृदय से निकालना होगा।

हरिषेण—इससे कार्य सिद्धि में क्या सहायता मिलेगी योगिराज !

योगिराज—समस्त दक्षिणपथ आज समुद्रगुप्त को महाराजाधिराज मानने को प्रस्तुत है। भारत माता के विच्छिन्न अवयव संयुक्त हो कर शक्तिशाली बन रहे हैं।

हरिषेण—इससे क्या होगा ?

योगिराज—इससे पश्चिमोत्तर सीमान्त से निरन्तर होने वाले आक्रमणों का परिहार होगा । समस्त भारत शक्ति-सम्पन्न बन कर अपनी सभ्यता और संस्कृति की रक्षा करेगा। यहां से ज्ञान-विज्ञान की वह पावन गङ्गा प्रवाहित होगी, जिसमें स्नान करके कोटि कोटि प्राणी जीवन में सुख शान्ति लाभ करेंगे। इस प्रकार जगत का कल्याण होगा। इस यश का भाजन कोई व्यक्ति बनेगा ही । समुद्र नहीं तो और कोई उत्पन्न होगा।

[समुद्र की ओर देखकर] क्यों समुद्र, क्या तुम इसके लिए प्रस्तुत नहीं ?

समुद्र—जो आज्ञा योगिराज—

तृतीय अंक

[द्वितीय दृश्य]

[पाटलीपुत्र का राजप्रासाद है। एक विस्तृत उद्यान में विशाल प्रस्तर खण्डों से निर्मित प्रासाद मानों गर्व से मस्तक ऊंचा किए खड़ा है। यह राजभवन महाराज अशोक का निर्माण किया हुआ है। एक पार्श्व में तीन ओर पाषाण-स्तम्भ पंक्तिबद्ध खड़े हैं। उनके मध्य में अति विशाल सभागृह है। इसके अन्तर्गत सुवर्ण जडित आसन चारों ओर बने हैं। केन्द्र में श्वेत प्रस्तर का मंच विराजमान हैं।

इस राजप्रासाद में कई दिनों से उत्सव हो रहा है। चारों ओर बन्दन वार लगी हैं। पुष्प माला और विविध प्रकार के प्रकाश स्तम्भों से इसकी सुन्दरता बहुत बढ़ गई है। संगीत की सरस धारा बह रही है।

प्रातःकाल सूर्यदेव भी इस उत्सव को ध्यान से देख रहे हैं। सभागृह के सम्मुख सैनिक वेशधारी प्रतिहार सावधान खड़े हैं। महाराजाधिराज समुद्रगुप्त मन्त्रणा भवन में आने वाले हैं। समस्त कर्मचारी उत्साह के साथ राज-काज में तल्लीन हैं। विजयोत्सव का समारोह समाप्त प्राय है।

द्वाररक्षक के रूप में कई प्रतिहार घूमते हुए वार्तालाप कर रहे हैं]

प्र० प्रतिहार—[समीपवर्ती प्रतिहार] तुमने एक बात सुनी ?

दू० प्रतिहार—क्या बात ?

प्र० प्रतिहार—महाराजाधिराज पाटलीपुत्र में आकर सबसे पहिले

उस चुड़ैल के पांव छूने गये।

दू० प्रतिहार—किस चुड़ैल के ?

प्र० प्रतिहार—उसी के—तुम नहीं जानते। वही जो छोटी महारानी कहलाती है। जिसने बड़े महाराज को पहाड़ों में घेर रक्खा था।

दू० प्रतिहार—हां! हां! समझा! अरे! कच की मां!

प्र० प्रतिहार—हां वही कच की मां!

दू० प्रतिहरा—अरे यह चुड़ैल है कि महाराक्षसी।

प्र० प्रतिहार—हां भाई। ठीक कहते हो। चुड़ैल भी अपने पति को इस तरह मारने का उपाय न करेगी।

दू० प्रतिहार—भाई, हमने तो रामायण पढ़ी है। राक्षसियां भी अपने पति के साथ ऐसा वर्ताव नहीं करतीं। यह तो न जाने कैसी स्त्री है! राम! राम! इसे क्या कहें ?

प्र० प्रतिहार—इसे नरक में भी ठिकाना न मिलेगा।

दू० प्रतिहार—भाई एक बात तो बताओ।

प्र० प्रतिहार—कौन बात ?

दू० प्रतिहार—हमारे बड़े महाराजाधिराज चन्द्रगुप्त बाबा दो दो ब्याह करके कहां चले गए ?

प्र० प्रतिहार—क्या तुम्हें नहीं मालूम ?

दू० प्रतिहार—नहीं भाई। मैं छुट्टी लेकर गांव चला गया था। अब आया हूं। तुम जानो, राजकाज की बात गुपचुप रहती है। मुझे कुछ पता न चल सका।

प्र० प्रतिहार—बड़े महाराजधिराज की बात अच्छी कही। अरे,

वह और जायेंगे कहां ! वहीं गए जहाँ दो या अधिक विवाह करने वाले जाते हैं ।

दू० प्रतिहार—कहां जाते हैं, सुनें भी !

प्र० प्रतिहार—भाई, तुम भी निरे गंवार ही हो । दो से अधिक विवाह करने वाले या तो राजा दशरथ की तरह तड़प २ कर मर जाते हैं, या जोरू जाँता से नाता तोड़कर जंगल में साधू बाबा बन जाते हैं । तुम्हें इतना भी पता नहीं !

दू० प्रतिहार—तो क्या बड़े महाराजाधिराज मर गए ?

प्र० प्रतिहार—अरे पगला चुप रह नहीं तो शूली लग जायगी । जानता नहीं, नये महाराजाधिराज माता-पिता के बड़े भक्त हैं ।

दू० प्रतिहार—बताओ तो सही ! उनका क्या हुआ ? मैं गांव गया तो सब लोग पूछने लगे ।

प्र० प्रतिहार—बड़े महाराजाधिराज ने सन्यास ले लिया । अब वह राज काज से अलग हो गए ।

दू० प्रतिहार—अच्छा ! ऐसी बात ! और महादेवी कहाँ ?

प्र० प्रतिहार—महादेवी, यही मगध में हैं । वह सचमुच देवी है ।

दू० प्रतिहार—उसमें क्या बात है ?

प्र० प्रतिहार—उस भूतनी कच की मां ने महादेवी को बहुत विकल किया, गालियां सुनाईं, लेकिन उस देवी के मुंह से कभी आह भी न निकली ! वह तो सचमुच कौशल्या महारानी है भाई !

दू० प्रतिहार—भाई, मुझे भी उसका दर्शन कराना !

प्र० प्रतिहार—वह, तो दर्शन ही करने योग्य है । ७० वर्ष की

बुढ़िया हो गईं लेकिन मुंह पर वह तेज है कि किसी देवी देवता को भी कहां हो !

दू० प्रतिहार—भाई यह तो बताओ, वह यहां अब आई हैं। पहले कहां रहती थीं ?

प्र० प्रतिहार—पहले अयोध्या में रहती थीं।

दू० प्रतिहार—तब तो साकेत वालों को उनके विषय में बहुत कुछ मालूम होगा। वे क्या कहते हैं ?

प्र० प्रतिहार—साकेत का एक निवासी प्रतिहार है। वह कहता था कि साकेत वाले उन्हें पूजते हैं। कहते हैं कि उनमें पार्वती की तपस्या और लक्ष्मी सी दया है।

ती० प्रतिहार—भाई, पुरानी बुढ़ियों की ही बातें करोगे कि और किसी की ? सुना है नई महारानी दक्षिण देश से आई हैं। उनका क्या हाल है ?

प्र० प्रतिहार—सच मानो भाइयो, कौशल्या को सीता ही मिल गई है। जैसा सुन्दर रूप, वैसी ही मधुर वाणी, वैसा ही मनोहर व्यवहार ! अभी दो ही चार दिन आए हुआ लेकिन छोटे बड़े सब पर उन्होंने मोहिनी डाल दी है।

[महाप्रतिहार आता हुआ दिखाई पड़ा। उसने उच्च स्वर में "सावधान" कहा। सभी प्रतिहार सीना निकाले अस्त्र-शस्त्र संभाल कर उचित रीति से खड़े हो गए।

महाराजाधिराज समुद्रगुप्त आगे आगे आ रहे हैं। उनके पीछे देश देशान्तर के राजा हैं। समुद्रगुप्त एक एक राजा को आज विदा कर रहे हैं। राजन्यवर्ग प्रसन्नता पूर्वक अपने अपने राज्य को प्रस्थान कर रहे हैं।

महाराजाधिराज अमात्यगण के साथ मन्त्रणा भवन में विराजमान होते हैं। महामात्य उनके वाम पार्श्व में हैं।]

समुद्रगुप्त—(महामात्य की ओर देखकर) देव !

महामात्य—परमेश्वर परम भट्टारक !

समुद्रगुप्त—आज की मन्त्रणा में कल्याण वर्मा की श्वश्रू और मेरी माता छोटी महारानी का रहना भी आवश्यक है।

महामात्य—जो आज्ञा !

[महामात्य अन्तःपुर में सन्देश भेजते हैं]

समुद्रगुप्त—[महामात्य की ओर देखते हुए] देव !

महामात्य—महाराजाधिराज !

समुद्रगुप्त—आपने ही इस वृद्धावस्था में भी राज-नौका को पार लगाया है। विपत्तियों के उमड़ते हुए सागर में मगध राज तिरोहित हो रहा था। आपने कुशल कर्णधार बन कर इसकी रक्षा की है। इसके लिए हम अत्यन्त आभारी हैं देव !

महामात्य—महाराजाधिराज, मैं इस यश का भागी नहीं हूँ।

समुद्रगुप्त—दूसरा कौन हो सकता है देव ? आपने मेरी सहायता करके मुझ पर व्यक्तिगत जो उपकार किए हैं, उनका मैं चिर ऋणी रहूँगा !

[कुमार देवी, छोटी महारानी, कल्याण वर्मा की श्वश्रू और दत्त-देवीका आगमन होता है। अमात्यगण खड़े हो जाते हैं। महाराजाधिराज कुछ उठकर सबका स्वागत करते हैं। स्त्री समाज महाराज के दक्षिण पार्श्व में सुशोभित होता है।]

समुद्रगुप्त—मां !

कुमार देवी—वत्स, इस राजोत्सव में तुमने विविध भांति के उपहार प्रदान किए हैं। मैं भी एक उपहार चाहती हूं।

समुद्रगुप्त—क्या आज्ञा है ?

कुमार देवी—राजमाता की उपाधि मेरी बहिन छोटी रानी कच की माता को मिले।

समुद्रगुप्त—इसी मन्त्रणा के लिए आप लोगों को यहां आमन्त्रित किया गया है। [छोटी रानी की ओर देखते हुए]

[महाप्रतिहार का प्रवेश]

महाप्रतिहार—परमेश्वर परम भट्टारक, दो योगिराज द्वार पर खड़े हैं। आपसे मिलना चाहते हैं।

समुद्रगुप्त—सम्मान सहित उन्हें यहां ले आओ।

महाप्रतिहार—जैसी आज्ञा महाराजाधिराज।

[महाप्रतिहार बाहर जाता है और दो सन्यासियों को साथ लाता है]

समुद्रगुप्त—स्वामिन् !

[आसन से उठ कर दोनों सन्यासियों को प्रणाम करता है]

समुद्रगुप्त—आप किस अरण्य प्रदेश को पावन करने चले गए ?

महामात्य—योगिराज, के राजोत्सव में सम्मिलित होने का निमंत्रण लेकर हमारे कर्मचारियों ने आपको प्रत्येक आश्रम में ढूंढा, किन्तु आपका कहीं पता न चला !

योगिराज—हम इस उत्सव को गुप्त रीति से देखना चाहते थे महामात्य। भारत के व्रात्य और ब्रह्मण्यों ने जिस सौहार्द्र

और स्नेह के साथ यह उत्सव मनाया है, वह देश का मंगल सूचक है !

समुद्रगुप्त—आप मगध में कब पधारे योगिराज ?

योगिराज—कुछ दिन हुए हृदय में प्रेरणा हुई अतः यहाँ आ गया। अब मगध से अन्यत्र जाना चाहता हूं।

समुद्रगुप्त—स्वामिन्, पाटलिपुत्र में कुछ दिन तक रह कर हमारी सेवा स्वीकार कीजिए, और राज-संचालन की सुबुद्धि प्रदान कीजिए।

योगिराज—आप अपना कार्य संचालन करिए। मैं तो दर्शक मात्र हूं महाराजाधिराज। राज्य की व्यवस्था देखने आया था। देख कर जा रहा हूँ। सुबुद्धि का दाता शंकर है।

समुद्रगुप्त—किधर प्रस्थान होगा योगिराज ?

योगिराज—पश्चिमोत्तर प्रदेशों में मगध के विरुद्ध कलहाग्नि सुलग रही है। पता नहीं कब प्रज्वलित हो उठे। अतएव उधर ही जाने की कुछ प्रेरणा हो रही है। अन्यथा, भगवान शंकर जिधर ले जाएं।

समुद्रगुप्त—योगिराज, मुझे भी चरों द्वारा शक और कुशानों के आक्रमण की सूचना मिली है। भारत देश पर यह नई विपत्ति आने वाली है।

योमिराज—नई क्यों परम भट्टारक! भारत शताब्दियों से पश्चिमोत्तर से होने वाले आक्रमणों को सहन करता आया है। भारत एक २ आक्रमणकारी पर विजयी हुआ है।

समुद्रगुप्त—स्वामिन्, कदाचित् इस बार एक आक्रमणकारी नहीं शक और कुशान सम्मिलित शक्ति से धावा बोलने वाले हैं।

योगिराज—भगवान शंकर की अनुकम्पा तथा भक्तों के प्रयास से भारत भी संयुक्त शक्ति प्राप्त कर चुका है। अब भारत अत्याचारियों से अपनी रक्षा सरलता पूर्वक कर सकता है, किन्तु आवश्यकता है एक निपुण शासक की !

समुद्रगुप्त—योगिराज का आशीर्वाद हमारा सहायक हो !

योगिराज—परम भट्टारक, भारत माता के कई अवयव अभी ध्वस्त पड़े हैं। कतिपय अंगों में चेतना आ गई है।

योगिराज—आर्त माता परम भट्टारक की ओर दृष्टि लगाए खड़ी है। कहीं उसे निराश न होना पड़े, राजाधिराज !

समुद्रगुप्त—स्वामिन्, निराशा की बात क्यों करते हैं ? मेरे जीवन का भी यही लक्ष्य है कि माता के ध्वस्त अवयव संयुक्त और स्वस्थ हो जायें ?

योगिराज—वैभव के आसव और राज-लिप्साकी वारांगणा ने कितनों को लक्ष्य भ्रष्ट कर दिया है परम भट्टारक ! योगियों के समान राजा महाराजाओं को भी ऋद्धियाँ सिद्धियां मोहित करने का प्रयास करती हैं। बिरले ही तपस्वी इन पर विजय प्राप्त करके लक्ष्य की ओर निरन्तर अग्रसर होते हैं।

समुद्रगुप्त—योगिराज, मैं प्रतिश्रुत होता हूं। आप के उपदेश सदा समुद्रगुप्त को तुच्छ बातों से ऊपर रखेंगे, किन्तु इस चेतावनी का कारण स्वामिन् !

योगिराज—परम भट्टारक ! सीमान्त से जो सन्देश मिल रहे हैं, वे अत्यन्त हृदय विदारक है। आपकी परीक्षा का समय आता है।

समुद्रगुप्त—वह कैसे स्वामिन !

योगिराज—कुशानोंने पुरुषपुर के पश्चिमी भागोंमें अपना क्रूर कार्य

आरम्भ कर दिया है। कई बौद्ध विहार लूट लिए गए। हिन्दू परिवार उजाड़े जा रहे हैं। स्त्रियों का सतीत्व बचने नहीं पाता। बालिकाओं को भगाया जा रहा है। यज्ञ हवन वर्जित कर दिया गया है। गो-ब्राह्मणों के आमूल उच्छेदन का प्रयास हो रहा है। मुझे वसुबन्धु का सन्देश मिला है। अतः मैं मगध से प्रस्थान कर रहा हूं।

समुद्रगुप्त—[चिन्ता-मग्न मुद्रा में] मुझे क्या आज्ञा है योगिराज! इस विकट समय में देश की नौका कैसे पार लगेगी?

योगिराज—भगवान शङ्कर आपके सहायक हों राजाधिराज! आप अपने कर्त्तव्य पालन में सफल हों। स्मरण रखिए, माता के अवयव ध्वस्त हुए।

[दोनों सन्यासियों का प्रस्थान। समुद्रगुप्त उन्हें द्वार तक पहुंचाने जाता है। अमात्यगण परम भट्टारक का अनुसरण करते हैं। समुद्रगुप्त चरण स्पर्श करके पुनः आसन पर बैठता है। अमात्यगण मन्त्रणा में तल्लीन हो जाते हैं]

समुद्रगुप्त—[गम्भीर मुद्रा में] अमात्यगण, पश्चिमोत्तर से एक भयंकर झंझावात उठने वाला है। समस्त भारत में क्रान्ति होने वाली है। योगिराज का संकेत आप समझ गये होंगे। ऐसी परिस्थिति में मेरी उपस्थिति मगध में नहीं, अपितु अत्याचार पीड़ित सीमान्तवासियों के मध्य आवश्यक है।

(अहिच्छत्र राजमहिषी की ओर देखते हुए) महारानी!

राज महिषी—परम भट्टारक!

समुद्रगुप्त—राजा कल्याण वर्मा कहां है? भाई कच के साथ मगध का राज्य संभालें। मेरा उचित स्थान सिंहासन नहीं, अश्वपीठ है; राजप्रासाद नहीं, युद्ध-क्षेत्र है।

राजमहिषी—परम भट्टारक, कल्याण वर्मा का नाम न लो। वह विलासी और कायर है। उसके हाथों राज का सर्वनाश हो जायगा।

समुद्रगुप्त—क्यों महारानी, आप ऐसा क्यों कहती हैं ? राजा कल्याण वर्मा हैं कहां ?

राजमहिषी—मैं क्या बताऊं राजाधिराज ! समय आप ही बता देगा। उस अयोग्य व्यक्ति से देश का क्या हित होगा ? उसका पता पूछकर आप क्या करेंगे ?

समुद्रगुप्त—इस समय देश वीरों का बलिदान चाहता है। [चिंतित मुद्रा में]

राजमहिषी—पुरुषों से वीरता लुप्त हो जायगी तो भारत की वीर स्त्रियां बलिदान करेंगी। आप चिन्ता न करें। आपकी उदारता और महानुभवता से वशीभूत होकर हम आपके लिए सर्वस्व समर्पण करने को प्रस्तुत हैं। अहिच्छत्र राज्य की सम्पूर्ण सम्पत्ति आपकी है भट्टारक। देश की रक्षा के लिए हमारा गण राज्य आपकी पूरी सहायता करेगा।

समुद्रगुप्त—धन्य हो राजमहिषी ! आपका प्रोत्साहन हमें पवित्र यज्ञ सम्पन्न करने की सामर्थ्य प्रदान करेगा। [कच की ओर संकेत करके] भाई कच, संभालो मगध को। मुझे सीमान्त में जाना ही पड़ेगा। महामात्य के सहयोग से राज-काज करते रहना।

कच—परमेश्वर परम भट्टारक ! मैं मगध राज्य से भी विशाल आप के हृदय राज्य में स्थान पाना चाहता हूँ। मेरे अपराधों को क्षमा करिए भैया ! मैंने आपके विरुद्ध क्या नहीं किया ! [चरणों पर गिरकर रुदन करता है] आप राम के साक्षात् अवतार हैं।

समुद्रगुप्त—भाई कच, यह क्या ? किसका और कैसा अपराध ! उठो। [समुद्रगुप्त उठाकर आँसू पोंछता है]

कच—मेरा एक निवेदन मानिए।

समुद्रगुप्त—कहो भाई ! क्या इच्छा है ?

कच—दैत्यों के साथ आप युद्ध करने जा रहे हैं। मुझे भी अपने साथ ले चलिए। आप स्पर्शमणि हैं। आपके संसर्ग में रह कर कृष्ण लौह भी स्वर्ण बन जायेगा।

[समुद्रगुप्त मौन हो जाता है निस्तब्धता छा जाती है]

समुद्रगुप्त—(कच की माता की ओर देखते हुए) छोटी महारानी, आज से आप महादेवी होंगी। भाई कच के नाम से मुद्रा निर्मित होंगी। हम दोनों भाई सीमान्त जा रहे हैं। आप राजकाज संभालें।

[महामात्य की ओर दृष्टि फेरते हुए] देव !

महामात्य—परमेश्वर परम भट्टारक !

समुद्रगुप्त—युद्ध की पूरी तैयारी होनी चाहिए। पूज्य पिता महाराजाधिराज की अनुपस्थिति में हम आपको ही पिता मानते हैं। देश पर जो महान् संकट आने वाला है, विपत्ति की घनघोर घटाएं घिर रही हैं, उनमें हमें एक मात्र आपका सहारा है देव !

महामात्य—परम भट्टारक ! आपकी सदाशयता ने विपत्तियों का निराकरण कर दिया है। आप सदा विजयी बनेंगे।

समुद्रगुप्त—वह कैसे देव !

महामात्य—मगध को बाहरी आक्रमण का उतना भय नहीं था जितना आन्तरिक विद्रोह का। किन्तु मैं देखता हूँ कि आपकी

महत्ता से आभ्यन्तरिक कलह मिट गया है।

समुद्रगुप्त—यह आपकी नीतिमत्ता का प्रमाण है देव !

महामात्य—परमेश्वर परम भट्टारक ! मुझे अधिक लज्जित न कीजिए। मैंने महामात्य पद के प्रलोभन में क्या न किया ! मैं आज उसका प्रायश्चित्त करना चाहता हूं।

समुद्रगुप्त—आप क्या कह रहे हैं देव ! मैं इन वचनों को सुनना भी नहीं चाहता।

महामात्य—राजाधिराज ! मैं अपनी सारी सम्पत्ति आपको समर्पण करता हूँ। देश की रक्षा के लिए आप इनका उपयोग कीजिए !

[महाबलाधिकृत की ओर संकेत करते हुए]

मैं अपने पुत्र को आपकी सेवा में अर्पण करता हूँ। आज यदि मैं युवा होता तो आपके साथ युद्ध क्षेत्र में वीर गति को प्राप्त करता और महाराज द्रोणाचार्य का सच्चा वंशज कहलाता। किन्तु अब [कंठ रुद्ध हो जाता है]

समुद्रगुप्त—(समीप जाकर) देव, आज समस्त भारत के नवयुवक देश की मर्यादा के लिए रक्त बहाने को प्रस्तुत हैं। हमें आपका आशीर्वाद और परामर्श अपेक्षित है आप ही कहा करते हैं कि दैत्य दल अपने दुराचार से स्वतः भस्म हो उठेगा। "नारयो यत्र शोचान्ति विनशत्याशु तत्कुलम् ।" नारी जाति का अपमान करके कभी कोई जाति प्रफुल्लित नहीं रह सकती देव ! शक और कुशान अपने ही कार्यों से अपना नाश करेंगे।

महामात्य—राजाधिराज, अब आप मगध की चिन्ता त्याग दें। मैंने राज्याभिषेक के समय परीक्षण कर लिया था। समस्त

दक्षिणापथ, उत्तरापथ के अधिकांश राजा और गण राज्य आपके आज्ञानुवर्त्ती हैं। समय अनुकूल है। दैत्यों को पराभूत करने का यह शुभ मुहूर्त है।

समुद्रगुप्त—देव, आपकी वाणी सत्य हो!

महामात्य—मैं वह दिन देखना चाहता हूं।

समुद्रगुप्त—किस शुभ दिन की प्रतीक्षा है देव?

महामात्य—जब दैत्यों पर विजय प्राप्त करके परमेश्वर परम भट्टारक सार्वभौम सत्ता स्थापित करेंगे और इसी पाटलीपुत्र में अश्वमेध यज्ञ सम्पन्न होने पर विश्व-कल्याण की योजना बनाई जायगी। उस समय भारतमाता को प्रसन्न देखकर मैं सुख पूर्वक इस लोक से प्रयाण करूंगा।

समुद्रगुप्त—देव, पता नहीं कब भारत माता के ध्वस्त अवयव स्वस्थ होंगे और उसके सुख के दिन आयेंगे! इसके लिए प्रबल शक्ति अपेक्षित है देव!

[महाबलाधिकृत की ओर देखते हुए] महाबलाधिकृत!

महाबलाधिकृत—परमेश्वर परम भट्टारक!

समुद्रगुप्त—युद्ध के लिए सेनापतियों को सन्नद्ध करिए।

महाबलाधिकृत—समस्त सेनापति, चतुरंगिणी सेना तथा नवयुवक वृन्द देश पर मिटने को प्रस्तुत हैं। केवल आज्ञा की प्रतीक्षा है।

समुद्रगुप्त—देव!

महामात्य—राजाधिराज!

समुद्रगुप्त—हमारी अनुपस्थिति में मुद्राओं पर भाई कच और

राजमाता की मूर्तियां अंकित होंगी !

कच—परमेश्वर परम भट्टारक, यह क्या ! यह अलौकिक बात !

समुद्रगुप्त—चुप रहो कच ! अभी मैं सिंहासनासीन हूं। मेरी आज्ञा है !

[कच मौन धारण कर लेता है। सभा-विसर्जित होती है। समुद्रगुप्त की उदारता का वर्णन करते हुए सब लोग प्रस्थान करते हैं। केवल दत्त देवी और समुद्रगुप्त रह जाते हैं। समुद्रगुप्त को अत्यन्त चिन्तित देखकर कुमार देवी विदूषक को उनके पास भेज देती हैं]

समुद्रगुप्त—[विदूषक को देखकर] विदूषक, आज यह कैसा रूप ! श्याम कुंचित केश संवारे लाल मुख बनाए चीनांशुक परि-धान धारण किए कहां को प्रस्थान है ?

विदूषक—एक गुप्त स्थान में जा रहा हूं।

समुद्रगुप्त—वृद्धावस्था में यौवन का आगमन कैसे ?

विदूषक—तपस्या की है राजाधिराज ! काया कल्प किया है। यों ही नहीं युवावस्था प्राप्त हुई है।

समुद्रगुप्त—किस गुप्त स्थान में जाना है। इस वृद्धावस्था में भी गुप्त-स्थान की खोज।

विदूषक—महाराज, युवावस्था में किसी नवयुवती को पसन्द न आया तो क्या करता। वृद्धावस्था में ही सही !

समुद्रगुप्त—युवावस्था में किसी ने पसन्द नहीं किया तो बुढ़ापे में कैसे कोई रीझेगी !

विदूषक—महाराज, स्त्रियां गुण पर रीझती हैं। भला और कोई वृद्ध से युवा हो सकता है ? मैं कायाकल्प द्वारा वृद्ध से युवा हो गया। इसलिए मुझ पर कई सुन्दरियां रीझ गई हैं।

समुद्रगुप्त—अच्छा ! यह बात है विदूषक ! आप विवाह करने चले हैं ! वह भी सुन्दरियों से ! वृद्धावस्था में !

विदूषक—क्या करूं महाराज ! नवयुवक विवाह करके युद्ध क्षेत्र में जायेंगे तो वृद्धों को नवयुवतियों का मन बहलाना ही पड़ेगा।

समुद्रगुप्त—(दत्त की ओर देखते हुए) प्रिये, सुना ! विदूषक क्या कह रहा है !

दत्तादेवी—(हंसते हुए) सुना आर्यपुत्र ! वृद्ध ब्राह्मण सत्य ही कह रहे हैं।

समुद्रगुप्त—अच्छा विदूषक, यह तो बताओ, यदि नवयुवक युद्ध क्षेत्र में न जायें तो विजय कैसे प्राप्त हो ?

विदूषक—महाराज, विजय प्राप्त का सहज उपाय है।

समुद्रगुप्त—क्या ?

विदूषक—अहिच्छत्र-राज महिषी राजसभा से जाकर अस्त्र विद्या का अभ्यास कर रही हैं। आप ऐसी बुढ़ियों की एक महती सेना तैयार कीजिए जिनके दांत गिर गए हों। उन्हें लड़ने का अभ्यास कराइए। युद्ध क्षेत्र में शत्रु अनायास उनके पोपले मुंह और बर्फ जैसे बालों से डर कर भाग जायेंगे ! किन्तु महाराज एक प्रार्थना है !

समुद्रगुप्त—वह क्या ?

विदूषक—मेरी प्रेयसी को युद्ध क्षेत्र में न ले जाना। अन्यथा मैं तो वियोग ज्वाला में भस्म हो जाऊंगा। मेरा बुढ़ापा बिगड़ जायगा। किसी ने सत्य कहा है कि जवानी बिगड़ जाय तो बिगड़ जाय किन्तु बुढ़ापा नहीं बिगड़ना चाहिए। मेरी प्रेयसी भी मेरे बिना तड़प २ कर मर जायगी। (दत्त देवी की ओर देखते हुए) क्यों देवी ठीक है न !

(तीनों का हंसते हुए प्रस्थान)

———

चतुर्थ अंक

[प्रथम दृश्य]

[मालव की राजधानी कर्कोट नगर के समीप विशाल राजप्रासाद हैं। राजप्रासाद के चतुर्दिक तीन परिखाएं बनी हैं। समुद्रगुप्त अपनी महती सेना को दूर ही छोड़कर प्रासाद में जा रहे हैं। महाराज चन्द्रवर्मा की माता विद्या ने महाराजाधिराज को आमंत्रित किया है। राजभवन शोभा रहित है। सर्वत्र निस्तब्धता छाई है। उत्सव के कोई चिन्ह नहीं है।

अमात्यगण महाराज का अभिनन्दन करते हैं। उन्हें सादर मंत्रणा-भवन में ले जाते हैं। विद्या, माधुरी तथा राज परिवार की स्त्रियां राजाधिराज का स्वागत करती हैं। मंत्रणा-भवन में अमात्यगणों के साथ विद्या तथा माधुरी बैठी हैं]

विद्या—वत्स, हम आपका स्वागत करती हैं। आपने इस समय मालव पधार कर हम पर जो कृपा की है, उसके लिए हम अति आभारी हैं !

माधुरी—परमेश्वर परम भट्टारक, आपका यश सुन रखा था। आज आप जैसे वीर का दर्शन करके हम कृतार्थ हुईं।

समुद्रगुप्त—देवियो, यह आपकी महानुभवता है। मैं किस योग्य हूं !

विद्या—भारत माता के लाल ! तुमसे यह धरा पवित्र होगी, क्योंकि वसुधा में भारत देव भूमि है। अन्य देश मानव भूमि हैं। देवता मानव को पवित्र करता है।

समुद्रगुप्त—आप आशीर्वाद दें देवी, जिससे मैं भारत माता का एक सेवक बन सकूं, और उसके ध्वस्त अवयवों को स्वस्थ बना सकूं।

विद्या—तुम समर्थ हो वीर!

समुद्रगुप्त—महादेवी, राजप्रासाद में इतनी उदासीनता क्यों? महाराज चन्द्रवर्मन कहां हैं?

विद्या—कहाँ बताऊं वत्स! मुझे इस वृद्धावस्था में यह कष्ट देखना था!

समुद्रगुप्त—यह अश्रुधारा क्यों महादेवी? क्या महाराज अस्वस्थ हैं?

विद्या—क्या तुम्हें उनका कुछ समाचार नहीं मिला वत्स!

समुद्रगुप्त—जो समाचार मिला वह विश्वसनीय नहीं है। इसलिए मैंने विश्वास नहीं किया।

विद्या—हाँ अस्वस्थ ही हैं वत्स!

समुद्रगुप्त—क्यों, क्या रोग है?

विद्या—रोग क्या बताऊं! उन्माद के अतिरिक्त उसे और क्या कहूँ!

समुद्रगुप्त—महादेवी, स्पष्ट बताइए। क्या वास्तव में महाराज चन्द्रवर्मा भिक्षु बन गए?

विद्या—मालव में रहते हुए प्रायः कहा करते थे कि भिक्षु बन जाऊंगा, किन्तु नवीन समाचार यह है कि वह सौराष्ट्र में क्षत्रपों की दासता कर रहे हैं। [नेत्रों से आंसू टपक पड़ते हैं, माधुरी अपने नेत्रों को अंचल से ढक लेती है]

समुद्रगुप्त—आप अधीर न हों महादेवी! भगवान शंकर महाराज

को सुबुद्धि प्रदान करेंगे। पर कारण क्या है कि वह आप लोगों को इस प्रकार निराश्रय छोड़कर चले गए? आयेंगे कब तक ?

विद्या—आने की आशा होती तो सान्त्वना होती वत्स ! पता नहीं इस भारत माता की क्या दुर्दशा होने वाली है।

समुद्रगुप्त—महादेवी ! आप इतनी अधीर क्यों हो रही हैं ?

विद्या—वत्स, मालती के भिक्षुणी बनने पर उन्हें उन्माद सा हो गया। उन्होंने एक प्रकार से राज काज त्याग दिया। कल्याण वर्मन मगध से भागकर यहां आया। उसने न जाने कैसी मंत्रणा दी कि दोनों महाक्षत्रप के पास सौराष्ट्र चले गए। सुना है कि क्षत्रप रुद्रदाम को युद्ध के लिए आमंत्रित करने गए हैं।

समुद्रगुप्त—किससे युद्ध करने के लिए ?

विद्या—मगध के राजाधिराज से। जिसकी ओर भारत माता आशा भरी दृष्टि से निहार रही है। जिसे भारतवासी देवतुल्य समझते हैं, उसी परम भट्टारक समुद्रगुप्त से युद्ध करने के लिए ! ऐसा अधर्मी हो गया चन्द्रवर्मा !

समुद्रगुप्त—आप चिन्ता न करें देवी ! यदि हमारा कार्य धर्म कार्य है, यदि हमने इस धर्म कार्य की सिद्धि के लिए धर्म बुद्धि रखी है तो भगवान शंकर हमें अवश्य सफल करेंगे।

महादेवी, राजा कल्याण वर्मा यहां आकर क्या कहते थे ?

देवी—वह कहते थे कि मगध का राज्य मेरा है। मैंने वाकाटकों और अहिच्छत्रों की सहायता से मगध का राज्य जीता तो कच उसका अधिकारी बन गया।

समुद्रगुप्त—अब राजा कल्याण वर्मा क्या चाहते हैं ?

देवी—कल्याण वर्मन महाक्षत्रपों की सहायता से मगध का राज्य जीतना चाहते हैं।

समुद्रगुप्त—महाराज चन्द्रवर्मा मुझसे क्यों द्वेष रखते हैं? मैंने उनका क्या अनहित किया?

[देवी मौन धारण कर लेती है]

माधुरी—राजाधिराज, पतिदेव की यह धारणा है कि मालती, आपके कारण ही, उन्हें प्राप्त न हो सकी। आपसे प्रतिद्वन्दिता का यही कारण है।

समुद्रगुप्त—प्रतिद्वंदिता मुझसे थी, उन्होंने मालव वासियों को क्यों त्यागा! आप लोगों ने क्या अनहित किया था?

महामात्य—परमेश्वर परम भट्टारक! हमारे महाराज अमात्यगणों से इस कारण रुष्ट हुए कि हमने उनका साथ न दिया।

समुद्रगुप्त—साथ न देने का क्या अर्थ? क्या आपने अपने महाराज का तिरस्कार किया?

महामात्य—तिरस्कार की भावना से हमने उनका विरोध नहीं किया।

समुद्रगुप्त—फिर आपने महाराज चन्द्रवर्मा का विरोध क्यों किया?

महामात्य—हमारा गणराज्य है। हमारा महाराज वही हो सकता है, जो जनता के हित अनहित में अपना हित-अनहित समझे। राजा के सुख-विलास के लिए जनता नहीं, जनता के सुख सुपास के लिए राजा होता है। जो राजा माया मोह में डूब कर प्रमादी बन जाय, विषयों में निमग्न होकर विलासी बन जाय, उसकी आज्ञा न मानने में राज्य का कल्याण है।

समुद्रगुप्त—यह कैसे मान लिया जाय कि महाराज चन्द्रवर्मा प्रमादी

और विलासी हो गए थे।

महामात्य—राजलक्ष्मी सदृश महारानी की विद्यमानता में एक भिक्षुणी से विवाह का विचार करना क्या विलासिता नहीं है? उस विवाह के लिए मगध साम्राज्य से युद्ध ठानना क्या प्रमाद नहीं है? हमारे मंत्रि-परिषद् ने मगध से युद्ध करना अस्वीकार कर दिया। इसी कारण महाराज आवेश में आ गये। महादेवी और महारानी ने भी उनके इस प्रस्ताव में अरुचि प्रकट की। अतएव इन्हें भी कोप भाजन बनना पड़ा। आप ही बताइए ऐसी परिस्थिति में हम क्या करते!

समुद्रगुप्त—(गम्भीर मुद्रा में कुछ सोचते हुए) एक विकट समस्या है महामात्य! राजनीति और धर्म नीति में विरोध खड़ा हो गया। इसे किस प्रकार सुलझाया जाय?

महामात्य—जनता के प्रतिनिधियों से परामर्श करके यह समस्या सुलझाई जा सकती है।

(दौवारिक का प्रवेश)

दौवारिक—देव, विनय स्थितिस्थापक अमात्य से मिलने कुछ लोग आए हैं।

विनय स्थितिस्थापक—दौवारिक, क्या वे लोग बौद्धभिक्षु हैं?

दौवारिक—हां महाराज! वे लोग कहते हैं कि आपने आज राज सभा में उन्हें बुलाया है।

विनय स्थितिस्थापक—परमेश्वर परम भट्टारक, सौराष्ट्र से भाग कर कई बौद्ध भिक्षु मालव आये हैं। उनके द्वारा शक क्षत्रपों का अत्याचार सुन लीजिये। मैंने इसी उद्देश्य से उन्हें आज बुलाया है। उनकी दुख गाथा हमारी वर्तमान समस्या को सुलझाने में सहायक होगी।

समुद्रगुप्त—महामात्य, भिक्षुओं से क्षत्रप राजनीति का कुछ ज्ञान हो जायगा। उनसे वार्तालाप कर लिया जाय।

महामात्य—(दौवारिक से) उनके प्रतिनिधियों को यहां ले आओ।

[दौवारिक के साथ चार भिक्षु प्रविष्ट होते हैं]

(नमो अर्हंताय......नमो बुद्धाय......अभिवादन करते हैं।)

समुद्रगुप्त—भन्ते, आप लोग सौराष्ट्र से क्यों चले आए ?

बौद्ध भिक्षु—राजाधिराज, हमारे विहार क्षत्रपों की क्रोधाग्नि में भस्म कर दिए गए।

समुद्रगुप्त—क्रोध का कारण ?

एक भिक्षु—महाक्षत्रप रुद्रदाम को किसी ने समझा दिया है कि भारतीयता के प्रतीक बौद्ध भिक्षु और ब्रह्मण्य है। इन दोनों का संहार करने से भारतीयता मिट जायगी और समस्त भारतवर्ष सदा के लिए क्षत्रपों की अधीनता स्वीकार कर लेगा।

दूसरा भिक्षु—परमेश्वर परम भट्टारक, इस नीति को निर्धारित करने में कल्याण वर्मा और चन्द्रवर्मा की भी प्रेरणा है।

समुद्रगुप्त—इसका प्रमाण !

तीसरा भिक्षु—राजाधिराज ! सौराष्ट्र में इनका आगमन होते ही रुद्रदाम ने नीति में परिवर्तन कर दिया।

समुद्रगुप्त—इस नीति से उनका क्या लाभ ?

चौथा भिक्षु—प्रतिहिंसा से प्रेरित प्राणी दूसरे के अनहित में ही अपना हित देखता है, राजाधिराज ! कल्याणवर्मा भारत के यश मयंक का राहु उत्पन्न हुआ है।

समुद्रगुप्त—इसका प्रमाण ?

एक भिक्षु—उसी ने महाराज चन्द्रवर्मा को भुलावा दिया। दोनों ने महाक्षत्रप रुद्रदाम से मंत्रणा की। यह भी सुना जाता है कि इन्होंने कुशानों को भी अपने पक्ष में सम्मिलित कर लिया है।

(एक गुप्त पत्र निकाल कर महाराज के हाथ में देता है)

यह पत्र राजनीति पर कुछ प्रकाश डाल सकेगा।

समुद्रगुप्त—यह पत्र किसने दिया ?

भिक्षु—हमारे महास्थविर ने निर्वाण के पूर्व दो पत्र लिखे। एक पत्र हमें देकर आपके पास भेजा।

समुद्रगुप्त—और दूसरा ?

भिक्षु—दूसरा पत्र अन्य भिक्षु के द्वारा शाकल में आचार्य वसुबन्धु को प्रेरित किया।

समुद्रगुप्त—"निर्वाण के पूर्व" से क्या प्रयोजन ?

दू० भिक्षु—राजाधिराज। आपको सौराष्ट्र की क्या दशा बतायें! महास्थविर का वध कर दिया गया।

समुद्रगुप्त—कहो भन्ते, निर्भीक होकर कहो! क्या हुआ ?

दू० भिक्षु—एक दिन सहसा मद्यप क्षत्रपों ने हमारा विहार घेर लिया। उन्हें सन्देह हो गया कि यदि उत्तरापथ में युद्ध छिड़ा तो बौद्ध भिक्षु क्षत्रपों का विरोध करेंगे। उन्होंने हमारे वध की योजना बनाई। हमारे महास्थविर को एक दिन पूर्व ही ज्ञात हो गया। उन्होंने दो पत्र लिखे और हमें भेज दिया।

समुद्रगुप्त—आपको महास्थविर के निर्वाण की घटना कैसे विदित हुई।

ती० भिन्नु—हमारे साथी उस दृश्य को अपनी आंखों देखकर आ रहे हैं। उनसे पूछिये।

समुद्रगुप्त—कहिए भन्ते। क्या रहस्य है ?

चौ० भिन्नु—राजाधिराज! एक दिन हमारे महास्थविर को रुद्रदाम ने सभा में बुलाया। उन्हें आज्ञा दी कि यौधेय राजकुमारी मालती को जो शाकल में भिन्नुणी हैं, सौराष्ट्र लाओ। महास्थविर ने इसका विरोध किया। इस पर शकाधिपति अति क्रुद्ध हुए और उन्होंने विहार को भस्म करने की आज्ञा दी। सैनिकों ने बिहार घेर लिया। बौद्ध भिन्नु किसी प्रकार भाग निकले किन्तु महास्थविर ने इसे कायरता समझी और विहार की रक्षा के लिए सेनापति को समझाते रहे। किन्तु उनकी सुनता ही कौन? सेनापति ने उन्हें भी भाग जाने को कहा पर वह विचलित नहीं हुए। अन्त में उन्होंने कहा कि मेरे देहावसान के उपरान्त ही विहार जलाया जा सकेगा। एक सैनिक ने महास्थविर का वध किया और दूसरों ने विहार को भी भस्मीभूत कर दिया।

समुद्रगुप्त—धन्य हो वीर महास्थविर। भन्ते! क्या शक राज्य से और व्यक्ति भी आए हैं ?

विनय स्थितिस्थापक—परम भट्टारक, कई ब्रह्मण्य परिवार भी भाग कर आए हैं।

समुद्रगुप्त—उन्हें भी बुलाइए।

[दौवारिक के साथ एक ब्रह्मण्य परिवार का प्रवेश]

(शरीर पर उपवीत, मस्तक पर चन्दन लगाए हुए हैं। समुद्रगुप्त को अभिवादन करते हुए)

ब्रह्मण्य—परमेश्वर परम भट्टारक की जय हो।

[समुद्रगुप्त उन्हें नमस्कार करता है]

समुद्रगुप्त—कहिए ब्राह्मण देव! क्षत्रपों का क्या वृतान्त है?

ब्राह्मण—राजाधिराज, क्षत्रपों ने ब्रह्मण्यों का मूलोच्छेदन प्रारम्भ कर दिया है। यही प्रगति रही तो सौराष्ट्र, सिन्धु और कौन्ती प्रदेशों में एक भी ब्रह्मण्य अवशिष्ट न रहेगा।

समुद्रगुप्त—किस प्रकार?

ब्राह्मण—क्षत्रपों ने यज्ञ हवन वर्जित कर दिया है। मन्दिर धराशायी किए जा रहे हैं। गोवध को प्रोत्साहन मिलता है। तीर्थाटन, सन्ध्या-पूजन अपराध समझा जाता है। यज्ञोपवीत जलाए जा रहे हैं।

समुद्रगुप्त—इसका कारण क्या है ब्राह्मण देव? शक क्षत्रप क्रमशः भारतीय बनते जा रहे थे। सहसा यह परिवर्त्तन क्यों?

ब्राह्मण—परमेश्वर परम भट्टारक! इस परिवर्तन के कई कारण हैं। प्रधान कारण यह है कि शक क्षत्रप ब्रह्मण्यों को शक्तिहीन समझने लग गये हैं।

समुद्रगुप्त—वह कैसे?

ब्राह्मण—मालव राज चन्द्रवर्मा और प्रतिहिंसा से जर्जरित कल्याण वर्मन क्षत्रपों के सहायक बन गए हैं। रुद्रदास को गर्व है कि उसने भारतीयों में दो दल बना दिए। मालवों की सहायता से वह मगध राज्य पर आक्रमण का स्वप्न देख रहा है।

समुद्रगुप्त—आश्चर्य है ब्राह्मण देव, शकों में इतना परिवर्तन क्यों हो गया! कई शताब्दियों से भारत में रहने पर भी वे भारतीय क्यों न बन गए!

एक ब्राह्मण—क्षत्रप कहते हैं कि कुछ अंश में भारतीय बनकर हमने अपना शौर्य नष्ट कर दिया, हमारी क्रूरवृत्ति कोमल होने लगी। चेष्टान का वीर वशंज अहिंसावादी कायर और दयालु बन गया। अहिंसा को भीरुता और दयालुता को निर्बलता बतलाते हैं। इसलिए उन्हें भारतीयता से द्वेष हैं।

समुद्रगुप्त—ब्राह्मण देव, क्या अन्य भी कोई कारण है ?

दू० ब्राह्मण—परमेश्वर परम भट्टारक! मुख्य कारण यह है कि वे अपने को भारतीय नहीं, प्रत्युत विदेशी समझते हैं।

समुद्रगुप्त—इसके दोषी हमें हैं ब्राह्मण देव!

ब्राह्मण—वह क्यों राजाधिराज!

समुद्रगुप्त—हमने आज तक उन्हें म्लेच्छ शूद्र कहकर पुकारा। आर्य शूद्र और म्लेच्छ शूद्र में भी विभेद करते रहे हैं।

ब्राह्मण—आर्य जाति को शुद्ध रखने के लिए यह भेद प्रभेद आवश्यक है राजाधिराज!

समुद्रगुप्त—यह विषय विवादास्पद है ब्राह्मण देव! किन्तु इसे निर्णय करने का आज उपयुक्त समय नहीं।

एक ब्राह्मण—यह बिषय शास्त्रार्थ का है।

महाबलाधिकृत—यह समय शकों को शास्त्रार्थ समझाने का नहीं, उन्हें शस्त्रार्थ बताना है।

[दौवारिक का प्रवेश। एक पत्र महादेवी के हाथ में देता है। बाहर कोलाहल हो रहा है। महादेवी विद्या पत्र पढ़ती हैं]

विद्या—वत्स।

समुद्रगुप्त—महादेवी!

विद्या—नागरिकगण आपका दर्शन करने को लालायित हैं। मालव के प्रतिनिधि आपसे मिलने आए हैं। उन्हें क्या आज्ञा है ?

ब्राह्मण—परमेश्वर परम भट्टारक ! हम लोगों के क्लेश निवारण की क्या विधि होगी ? क्या हम लोग क्षत्रपों का राज्य सदा के लिए त्याग दें ?

समुद्रगुप्त—धैर्य धरिए ब्राह्मण देव ! भगवान शंकर कोई मार्ग निकालेंगे ही !

[महादेवी की ओर देखते हुए] महादेवी, चलिए प्रतिनिधियों से परामर्श किया जाय।

[महादेवी, माधुरी, अमात्यगण समुद्रगुप्त के साथ बाहर आते हैं। बाहर नागरिकों का समुदाय खड़ा है।

महाराजाधिराज समुद्रगुप्त की जय जयकार से वायुमंडल गूंज उठता है। समुद्रगुप्त प्रसन्न मुद्रा में खड़े हैं। कोलाहल क्रमशः शान्त हो जाता है।]

महामात्य—नागरिकगण ! हम आपकी ओर से मालव में मगध के महाराजाधिराज का स्वागत करते हैं।

[महाराजाधिराज समुद्रगुप्त की जय जयकार होती है]

समुद्रगुप्त—मालव वीरो, आपने जिस उत्साह के साथ मेरा स्वागत किया है, उसके लिए मैं आपका अनुगृहीत हूं। मैं आप लोगों के दुख-सुख में सम्मिलित होने आया हूँ। मालव ने आततायी भारतियों से भारत की सदा रक्षा की है। इसका श्रेय आपको रहा है। अत्याचारी हम पर पुनः आक्रमण करने का प्रयास कर रहे हैं।

एक नागरिक—आक्रमण का प्रयास ही नहीं कर रहे हैं अपितु धावा बोल दिया है। हम तक्षशिला से भाग कर आ रहे हैं। अत्यन्त दुःखी हैं महाराजाधिराज !

महामात्य—नागरिको ! आप शान्त रहें।

समुद्रगुप्त—मैं आपके विचार और दुख सुख की वार्ता सुनने आया हूँ वीरो !

[समुद्रगुप्त बैठ जाते है । तक्षशिला वासी को बुलाने का संकेत करते हैं। एक विशालकाय गौर वर्ण व्यक्ति मंच पर आता है।]

समुद्रगुप्त—आप तक्षशिला की राजनीति पर प्रकाश डालिए।

तक्षशिला वासी—सज्जनो, मैं तक्षशिला से आ रहा हूँ। कुशानों ने गोमती का बौद्ध विहार भस्म कर दिया। पुरुषपुर के पश्चिमी भागों से भारतीय उजाड़ दिए गए। म्लेच्छ स्त्रियों पर घोर अत्याचार कर रहे हैं। कितने मन्दिर धराशायी हो गए। ब्रात्यों और ब्रह्मण्यों के धार्मिक कृत्य अपराध समझे जाते हैं। काश्मीर के पंच प्रदेश पर म्लेच्छों ने धावा बोल दिया है। आज भारत के सीमान्त को विदेशियों ने हस्तगत कर लिया है। दार्विक प्रदेश में एक भी भारतीय जीवित नहीं बचा है। यदि शत्रुगण इसी प्रकार आगे बढ़ते रहे तो समस्त उत्तरापथ शीघ्र ही अभारतीयों के अधिकार में चला जायगा।

हमारी दीन दशा की आप कल्पना भी नहीं कर सकते। हमारी बहिनों और बेटियों को म्लेच्छ बलपूर्वक पकड़ ले जाते हैं। हमारी धन सम्पत्ति छीन लेते हैं। नन्हें २ शिशुओं को मां के सामने भाले की नोक पर नचाते हैं। मां बहिनों को वस्त्र-

रहित करके उनकी जो दुर्दशा करते हैं, उसका वीभत्स दृश्य वर्णन नहीं किया जाता।

[इतना कहते २ भावावेश के कारण अश्रुपात होने लगता है। कंठ रूद्ध हो जाता है। वह मंच पर बैठ जाता है।]

समुद्रगुप्त—मालव वीरो! आपने देश की परिस्थिति का अनुमान लगा लिया होगा। आपको अपना मत देना होगा।

[कोलाहल मचता है। हम मर मिटेंगे पर अपना गौरव नष्ट नहीं होने देंगे]

समुद्रगुप्त—प्रतिनिधिगण। आपके सामने इस समय विकट प्रश्न है।

एक अमात्य—हम इस प्रकार के विकट प्रश्न सदा सुलझाते आए हैं।

समुद्रगुप्त—सदा आपके साथ आपके महाराज भी होते थे। आज आपके महाराज चन्द्रवर्मा शत्रुओं के साथ हैं। आपको सोच समझ कर पग उठाना होगा। मैं प्रतिनिधियों की सम्मति जानना चाहता हूँ।

एक प्रतिनिधि—मैं ब्राह्मणों की ओर से आपको पूर्ण विश्वास दिलाता हूं कि हम देश और धर्म की रक्षा के लिए सर्वस्व समर्पण कर देंगे। हम द्रोणाचार्य की सन्तान हैं। हमारे एक हाथ में शास्त्र है दूसरे में शस्त्र भी रहता है।

दू० प्रतिनिधि—मैं क्षत्रिय वर्ग की ओर से आपको पूर्ण सहायता का आश्वासन देता हुँ। हम रघु के वशंज हैं। युद्ध में प्राण विसर्जन करना हमारा धर्म है। हम पूर्णतया अपने धर्म का पालन करेंगे।

ती० प्रतिनिधि—हम सार्थवाह अपनी सम्पूर्ण सम्पत्ति आपको सौंप देंगे। आप इस युद्ध को विजय प्राप्त होने तक चलाते जाइए हम लोग सब प्रकार से आपकी आर्थिक सहायता करेंगे।

चौ० प्रतिनिधि—मैं शूद्र समाज की पूर्ण सहायता का वचन देने आया हूं। म्लेच्छों के विरुद्ध युद्ध में आप जो भी सेवा चाहेंगे, हम देने को प्रस्तुत हैं।

पांचवा प्रतिनिधि—मैं व्रात्यों का प्रतिनिधि होकर आपसे प्रतिज्ञा करता हूं कि हमारी पूर्ण सहानुभूति आपके साथ है। बौद्धों ने पूर्व काल में कई वार भारत-शत्रुओं का साथ दिया था किन्तु इस बार कोई भी व्रात्य भारत-द्वेषी नहीं बनेगा।

समुद्रगुप्त—मालव वीरो, हम भारतीय स्वयं जीवित रहना और अन्य देश को जीवित रखना चाहते हैं। हम राज प्रलोभन में फंसकर कभी दूसरे पर आक्रमण नहीं करते, किन्तु अपने देश पर किसी का आक्रमण देख भी नहीं सकते। हम किसी देश के साथ अन्याय नहीं करते और न किसी के अन्याय को भीरु बनकर सहन कर सकते। यही हमारा धर्म है यही हमारी नीति है।

[कोलाहल होता है—महाराजाधिराज समुद्रगुप्त की जय हो]

समुद्रगुप्त—आज सौभाग्य से दक्षिणापथ के समस्त राजा हमारे साथ हैं। उनके मिल जाने से हमारी शक्ति बहुत बढ़ गई है। शक और कुशान की सम्मिलित शक्ति हमें किसी प्रकार विचलित नहीं कर सकती।

[कोलाहल—महाराजाधिराज समुद्रगुप्त की जय हो]

समुद्रगुप्त—नागरिको, केवल एक व्यक्ति की जय बोलने से कार्य सिद्धि न होगी।

एक प्रतिनिधि—हमें आप में पूर्ण विश्वास है। आपकी जय सारे भारत की जय है!

समुद्रगुप्त—भारत माता जय विजय नहीं चाहती। वह हीनावस्था में पड़ी है!

दू० प्रतिनिधि—वह क्यों?

समुद्रगुप्त—आप जानते हैं उसके समस्त अवयव ध्वस्त हो गए थे। वह मृतक प्राय हो रही थी, किन्तु भगवान शंकर की अनुकम्पा से ध्वस्त अङ्ग संयुक्त हो रहे हैं। केवल इसका मस्तक अर्थात् काश्मीर और सीमान्त का भाग अभी तक विलग ही हैं। वीरो, माता के मस्तक को विच्छिन्न देखकर क्या आपको वेदना नहीं होती!

ती० प्रतिनिधि—हमें अत्यन्त क्लेश होता है राजाधिराज! पर हम निस्सहाय हैं। क्या करें?

समुद्रगुप्त—भारत माता को स्वस्थ और शक्तिशाली बनाने में प्रत्येक मातृभक्त भारतीय का कुछ कर्त्तव्य है।

चौ० प्रतिनिधि—क्या कर्त्तव्य है परमेश्वर परम भट्टारक?

समुद्रगुप्त—सीमान्त, कश्मीर, तथा सिन्धु और कौन्ती प्रदेशों को भारत में संयुक्त करने का प्रयास।

पांचवा प्रतिनिधि—किस प्रकार?

समुद्रगुप्त—शुद्ध सदाचारमय जीवन बिताकर! मैं आपसे अन्य कोई सहायता नहीं चाहता। मैं आप से संयममय जीवन चाहता हूं। हृदय उदार रखिए, विचार उदात्त बनाइए, प्रत्येक भारतीय को भाई समझिये। जिस व्यवसाय में आप लगे हों उसे सत्य-निष्ठा के साथ सम्पन्न कीजिए। इस प्रकार आप

में भारत माता को स्वस्थ और सुखी बनाने की शक्ति अनायास आ जायेगी।

स्त्री प्रतिनिधि—हम स्त्रियों को क्या करना होगा राजाधिराज !

समुद्रगुप्त—आपको अहिच्छत्र की महारानी अपना अनुभव बताएंगी।

अहिच्छत्र महारानी—बहिनो, पुरुषों को सत्पथ और दुष्पथ पर ले जाने वाली स्त्रियां होती हैं। आप यदि चाहें तो भारत माता के ध्वस्त अङ्ग शीघ्र ही संयुक्त हो जायें।

स्त्री प्रतिनिधि—किस प्रकार महारानी !

महारानी—पुरुष स्वभाव से कलहप्रिय और स्त्रियां शान्त होती हैं। किन्तु मैं उन स्त्रियों में थी जिसने मोहवश अपने जामाता को राज्य दिलाने के लिए राजाधिराज समुद्रगुप्त से युद्ध किया। महाराज विजयी हुए। विजय पश्चात् उनके उच्च चरित्र को देखकर मैं दासी बन गई। मेरा जामाता मद्यप कल्याण वर्मा आज शत्रु स्कन्धावार में हमसे युद्ध करने को तना खड़ा है। मैं उसके साथ भारतीयता की रक्षा के लिए लड़ने जा रही हूँ।

नागरिक—धन्य हो महारानीं !

महारानी—मैं बहिनों से यही चाहती हूं कि आप भारत माता को स्वस्थ बनाने के लिए स्वयं योग्य बनें और पुरुषों को इस योग्य बनायें कि वह देशद्रोह न कर सकें। स्मरण रखिये देशद्रोह सबसे बड़ा पाप है।

एक स्त्री—वह क्यों महारानी ?

महारानी—अन्य पापों से उतने व्यक्तियों का अनहित नहीं होता

जितने लोगों को देश-द्रोह के कारण क्षति उठानी पड़ती है। एक देश-द्रोही सारे देश को ले डूबता है। अतएव यदि भाई-बन्धु या पति भी देश-द्रोही बन जाय तो उसका भी विरोध करना धर्म है।

स्त्री समाज—ठीक है महारानी! एक देश-द्रोही अगणित स्त्रियों को विधवा कर देता है। कितनी माताओं को निस्संतान बना देता है। हम आप से सहमत हैं।

महारानी—बहिनों, क्या अवसर पड़ने पर आप शत्रुओं का सामना कर सकेंगी? क्या आप चिकित्सकों के साथ आहत सैनिकों की सेवा सुश्रूषा कर सकेंगी?

भीड़—हां कर सकेंगी।

महारानी—तब हम शत्रुओं पर अवश्य विजयी बनेंगी।

[महारानी की जय जय कार से आकाश गूंज उठता है। सन्ध्या वन्दन का समय हो जाता है। सभा विसर्जित होती है। नागरिक परस्पर बातें करते घर जाते हैं। सर्वत्र युद्ध की चर्चा होने लगी। लोगों में वीरता के चिन्ह दृष्टिगत होने लगे।]

चतुर्थ अंक

[द्वितीय दृश्य]

[अपगा नदी के दाहिने तट पर शाकल नगरी स्थित है। उसी के समीप विस्तृत भूमि पर क्षत्रप देवपुत्र तथा शाही शाहानुशाही के स्कन्धावार निर्मित हैं। नदी के बायें तट पर महाराजाधिराज समुद्रगुप्त का स्कन्धावार है। इसमें उत्तरापथ के समस्त गणराज्य तथा दक्षिणपथ के नृपति अपनी सेना सहित विद्यमान हैं।

क्षत्रप रुद्रसिंह के समीप कल्याणवर्मा और चन्द्रवर्मा के शिविर हैं। महीनों से युद्ध हो रहा है। समुद्रगुप्त ने शाकल का दुर्ग घेर लिया है। सन्ध्या समय युद्ध बन्द हो जाता है। कई दिनों से युद्ध बन्द है। कुशानों ने विराम सन्धि कर ली है।

समुद्रगुप्त के शिविर में सन्ध्या बन्दन समाप्त होने पर मंत्रणा हो रही है। दक्षिणापथ की सेना के महासेनापति महाराज ककुत्स राज को महाकान्तार, कोरल, पिष्ठपुर, कोट्टूर, एरंडपल्ल, काँची, अवमुक्त, वेंजी, देवराष्ट्र आदि राज्यों के सेनापतियों के साथ आते हैं।]

समुद्रगुप्त—[ककुत्स राज की ओर देखते हुए] महाराज, क्या नया समाचार है ?

ककुत्सराज—परमेश्वर परम भट्टारक, विराम सन्धि म्लेच्छों की कूटनीति प्रतीत होती है।

समुद्रगुप्त—इसका प्रमाण ?

ककुत्सराज—म्लेच्छ राज्यों के विभिन्न भागों से देवालय गिराने और यज्ञ-हवन बन्द करने के दुःसंवाद नित्य मिलते रहते हैं।

समुद्रगुप्त—जैसे ?

ककुत्सराज—मूलस्थानपुर के विशाल सूर्य मन्दिर का कुछ अंश पहले ही तोड़ा गया था, इस विराम काल में अवशिष्ट भाग को भी क्षत्रपों ने धराशायी कर दिया।

समुद्रगुप्त—और कोई उदाहरण ?

ककुत्सराज—मूलस्थानपुर से भाग कर कई परिवार यहाँ आए हैं, उनकी दुःख गाथा सुन लीजिए।

[कई स्त्रियाँ सामने आती हैं। नेत्रों से आंसू बह रहे हैं।]

एक स्त्री—राजाधिराज, शकों ने हमारी बालिकाओं से विवाह करने का दुराग्रह किया। हमने इसका विरोध किया उन्होंने बलात् हमारी बेटियों को घर से निकाल लिया और हमारे घरों में आग लगा दी।

दू० स्त्री—राजाधिराज, हमारे लड़कों से कहा कि तुम हिन्दू-धर्म छोड़ कर शक बन जाओ। जब उन्होंने अस्वीकार किया तो हमारे सामने उनकी बोटी बोटी काट डाली। महाराज [रोने लगती है]

ती० स्त्री—राजाधिराज, एक रात कई शक हमारे घर के द्वार तोड़ कर घुस आये। पुरुषों को मारने लगे तो हम स्त्रियों ने उनकी कमर पकड़ ली। फिर उन्हें बड़ा रोष आया और उन्होंने हमारे केश पकड़ कर हमें नग्न किया। फिर जो दुर्दशा की उसका वर्णन कैसे करें महाराज। एक द्रौपदी की चीर बचाने को भगवान कृष्ण ने अवतार लिया था आज सहस्रों स्त्रियों की लाज जा रही है। फिर भी हमारे भगवान कहां सोये हैं ?

[रोने लगती है]

समुद्रगुप्त—मत रोओ मां ! धैर्य धारण करो ।

चौ० स्त्री—कैसे धीरज धरें महाराज । सुना है कि आप इन म्लेच्छों से सन्धि कर रहे हैं। इनका विश्वास न करिए महाराज।

पां० स्त्री—मानव का विश्वास किया जाता है राजाधिराज, दानव का नहीं। ये म्लेच्छ आपके साथ विश्वासघात करेंगे।

समुद्रगुप्त—मां, विराम सन्धि कई कारणों से आवश्यक हो गई थी।

एक स्त्री—परम भट्टारक, सन्धि की आवश्यकता उन्हें होती है जो निर्बल होते हैं। आपकी सन्धि का अर्थ हुआ पराजय !

समुद्रगुप्त—नहीं मां, ऐसी सन्धि कभी नहीं करेंगे जिससे भारतीय गौरव को ठेस पहुँचे।

दू० स्त्री—हमारे गौरव को ठेस पहुँच चुकी महाराज ! न जाने कितने हिन्दू भय के कारण शक बन गए। जो जाति अपने भाइयों की रक्षा नहीं कर सकती वह एक दिन मिट जाती है।

ती० स्त्री—(आवेश में आकर) जो राजा समाज की रक्षा नहीं कर सकता उसे राज करने का क्या अधिकार ? आप इतने राजागण एकत्र हुए हैं और इन म्लेच्छों को देश से भगा नहीं सकते ! आप लोगों को राज करने का क्या अधिकार है ?

समुद्रगुप्त—(हरिषेण से) इन माताओं की सारी बातें लिख लीजिए।

हरिषेण—जो आज्ञा परम भट्टारक !

(स्त्रियाँ अपना वृतान्त हरिषेण और ककुत्सराज को लिखाती हैं)

दौवारिक—महाराज यौधेयराज पधारे हैं।

समुद्रगुप्त—आदर सहित साथ लाओ।

[दौवारिक जाता है और यौधेयराज प्रविष्ट होते हैं]

समुद्रगुप्त—महाराज, सैन्य शक्ति में कितनी वृद्धि हुई ? सेना शिथिल तो नहीं पड़ रही है ? सन्धि काल में यही भय रहता है।

यौधेयराज—परम भट्टारक, अहिच्छत्र राज महिषी ने सशस्त्र युद्ध करके समस्त हिन्दू जाति में उत्साह भर दिया है। मालव और यौधेय मर मिटने को कटिबद्ध हैं। आज देश का प्रत्येक युवक सैनिक है, प्रत्येक बालिका दुर्गा है। अब विराम सन्धि को समाप्त कीजिए ! हमें आपकी नीति समझ में नहीं आती।

समुद्रगुप्त—यौधेयराज, सन्धिकाल में भी युद्ध का ही कार्य हो रहा है। अनावश्यक रक्तपात से क्या लाभ ?

यौधेयराज—हम भी अनावश्यक रक्तपात नहीं चाहते, किन्तु अनावश्यक सन्धि भी हानिकर है।

समुद्रगुप्त—[दौवारिक से] महाबलाधिकृत और महागुप्तचर और महा सन्धिविग्रहिक को सूचना दो।

दौवारिक—जो आज्ञा देव !

[बाहर चला जाता है]

[ककुत्सराज और हरिषेण स्त्रियों को विदा करके परम भट्टारक के पास आते हैं।]

समुद्रगुप्त—(हरिषेण से) अमात्य, आज मंत्रण द्वारा निश्चय करना है कि विराम सन्धि की अवधि क्या हो !

हरिषेण—शत्रुगण सन्धि के नियमों को तोड़ते जा रहे हैं। हम कब तक यह अपमान सहन करते रहेंगे ? हमारी सैन्य शक्ति

शक और कुशानों को कुचलने के लिए पर्याप्त हैं।

[महागुप्तचर का प्रवेश। एक गुढ़ लेख्य लिखित एक पत्र समुद्रगुप्त के हाथ में देता है।] समुद्रगुप्त पत्र पढ़कर प्रसन्न दिखाई पड़ते हैं।

[महा सन्धिविग्रहिक का प्रवेश। समुद्रगुप्त को अभिवादन करता है]

समुद्रगुप्त—महा सन्धिविग्रहिक, क्या समाचार लाये हो ?

महा सन्धिविग्रहिक—परमेश्वर परम भट्टारक, कुशान आधीनस्थ दो राजाओं ने हमसे सन्धि स्वीकार करली है। वे अपने मुद्रायों पर परमेश्वर परम भट्टारक का नाम अङ्कित करा रहे हैं।

समुद्रगुप्त—मैं इसी की प्रतीक्षा कर रहा था सन्धिविग्रहिक !

[अमात्यगण, दक्षिणापथ के राजा, महामात्य एकत्रित होकर मंत्रणा करते हैं]

महा सन्धिविग्रहिक—परमेश्वर परम भट्टारक, आपको एक और शुभ समाचार सुनाना चाहता हूं।

समुद्रगुप्त—क्या है सन्धिविग्रहिक ?

महा सन्धिविग्रहिक—आपने दूत को सासानी राज्य में जिस उद्देश्य से भेजा था, वह भी सफल हो गया।

समुद्रगुप्त—किस प्रकार ?

महा सन्धिविग्रहिक—सासानी सम्राट् शापुर द्वितीय ने कुशान देवपुत्र ग्रमबेतस पर आक्रमण करने की आज्ञा दे दी है। सेना क्षानिक देश पार कर चुकी है।

सन्धिविग्रहिक—सासानी सम्राट् शापुर को यह बिश्वास दिला दिया गया कि दैवपुत्र ग्रमबेतस इस युद्ध में विजय प्राप्त कर

के आप पर आक्रमण करेगा। इस कारण उसकी शक्ति को कुचलने के लिए आप पश्चिम से आक्रमण करें और समुद्रगुप्त पूर्व से। इस प्रकार उसको पराजित किया जा सकता है।

समुद्रगुप्त—राजन्यवर्ग तथा अमात्यगण, अब कदाचित् आप लोग विराम सन्धि का कारण समझ गये होंगे। मुझे शापुर के आक्रमण से अधिक प्रसन्नता इस बात के कारण हुई है कि कुशान आधीनस्थ दो राजा हमारा साथ देने को प्रस्तुत हैं।

यौधेयराज—परम भट्टारक, शकों और कुशानों को जीत लेने पर वे स्वतः हमारी आधीनता मान लेते। इनके लिए प्रतीक्षा क्यों की गई ?

समुद्रगुप्त—यौधेयराज, किसी को जीतकर आधीन बनाना उसे विद्रोही बनाना है। मित्रता हृदय की होती है। अस्त्र द्वारा मित्रता कैसे हो सकती है ? इसके अरिरिक्त किसी को बलात् कब तक अपने आधीन रक्खा जा सकता है ? पालद और शालद महाराज ने अपनी मुद्राओं पर मगध का राजचिन्ह अंकित करके सच्ची भारतीयता का परिचय दिया है। अब वे हमारे मित्र हैं। युद्ध के उपरान्त हमारे वैरी होते।

[दौवारिक सहसा प्रवेश करता है]

दौवारिक—परमेश्वर परम भट्टारक ! आचार्य बसुबन्धु आये हैं।

समुद्रगुप्त—उन्हें सादर यहाँ लाओ।

[आचार्य वसुबन्धु का प्रवेश]

वसुबन्धु—एक गुप्त मंत्रणा करनी है।

[दोनों एक ओर बैठ जाते हैं]

वसुबन्धु—आज निशीथ काल में क्षत्रपों और कुशानों का आक्रमण

होगा। सावधान हो जाइए।

समुद्रगुप्त—इसका प्रमाण ?

वसुवन्धु—यदि भिक्षुणी मालती जीवित रही तो वह आपको प्रमाण देगी !

सयुद्रगुप्त—आप यहाँ तक कैसे आ पहुँचे ? शत्रुओं ने रोका नहीं ?

वसुवन्धु—आप जानते हैं कि क्षत्रपों ने विहार के चतुर्दिक् घेरा डाल रखा है। हम लोगों के प्राण संकट में हैं। विराम सन्धि के कारण पहरा कुछ शिथिल हो गया है। अतएव मैं एक सैनिक का परिधान पहनकर आप तक आया हूँ। अब मैं जा रहा हूं।

समुद्रगुप्त—आपके प्राण संकट में पड़ जायेंगे। अब आप लौट कर न जाइए।

वसुवन्धु—परम भट्टारक। आप और ऐसा उपदेश ! मैं द्वाररक्षक से प्रतिश्रुत हूं। मैं अवश्य लौटूंगा। मेरे प्राण का क्या मूल्य ? मालती के प्राण संकट में हैं, देखें उनकी रक्षा कैसे होती है ?

[आचार्य वसुवन्धु जाना चाहते हैं।]

समुद्रगुप्त—ठहरिए, गुप्तचर के रूप में शरीर रक्षक के साथ जाइए।

वसुवन्धु—मैं अहिंसावादी हूँ परम भट्टारक ! शस्त्र धारियों की आवश्यकता हमें नहीं होती।

[वसुवन्धु प्रस्थान करते हैं। समुद्रगुप्त राजन्यवर्ग, महाबलाधिकृत, अहिच्छत्र राजमहिषी आदि के साथ मंत्रणा करते हैं।]

समुद्रगुप्त—महासेनापति ! आप शत्रुओं के मार्ग को इस प्रकार भ्रमात्मक बना दीजिए कि उनकी सेना हमारे स्कन्धावार तक

पहुँचते पहुँचते दलदल में फंस कर नष्ट हो जाये। शीघ्रता कीजिए। इस सम्बन्ध में आपका जलप्रवाह आपका सहायक हो सकता है।

[निस्तब्धता में सहस्रों साहसी व्यक्ति इस ढंग से परिखा को दलदल बना देते हैं कि ऊपर से पक्का मार्ग प्रतीत हो]

समुद्रगुप्त—ककुत्सराज, आप शत्रु के किस दल पर आक्रमण करेंगे ?

ककुत्सराज—जिस दल पर आज्ञा हो ! मैं अभी तक दैवपुत्र प्रमचेतस की सेना से युद्ध करता रहा।

समुद्रगुप्त—ठीक है। [मानचित्र देखता हुआ] आज उनकी सेना इस रूप में है। आप यदि अपने सैनिकों को शकट व्यूह में रक्खें तो अधिक उपयोगी हो।

ककुत्सराज—मैंने भी यही सोचा है। मध्य में पैदल सैनिक और दोनों पक्ष में अश्वारोही। सबसे पीछे पैदल। इस प्रकार हम शत्रुओं को पश्चिम भागने से रोक सकेंगे।

समुद्रगुप्त—यौधेय राज ! आपका युद्ध किससे होगा ?

यौधेयराज—अब तक मैं शाही सेना से लड़ता रहा, किन्तु आज चन्द्रवर्मन से लड़कर उसका रक्त पीना चाहता हूँ।

समुद्रगुप्त—नहीं महाराज, चन्द्रवर्मन को जीवित पकड़ना है। उसके बध का प्रश्न बन्दी बनाने पर उठेगा। आप शाही सेना के साथ ही लड़िए।

यौधेयराज—आपकी जैसा आज्ञा हो।

[युद्ध के लिए जाना चाहते हैं]

समुद्रगुप्त—महाराज [मानचित्र देखते हुए] शाहानुशाही सेना

इस रूप में होगी। आप मकर व्यूह बनाएं तो अधिक उपयोगी हो।

यौधेयराज—यही मेरी भी इच्छा है।

[यौधेयराज का प्रस्थान]

समुद्रगुप्त—महासेनापति, आप साकेत और मगध की सेना को क्षत्रप रुद्रसिंह के विरोध में ले जाइए। आप जानते हैं महाक्षत्रप अनुभवी योद्धा है।

हरिषेण—मथुरा में उसका अनुभव परख चुके हैं, आज शाकल में भी परीक्षा कर लेंगे।

[समुद्रगुप्त के मुख पर स्मितिरेखा। महासेनापति जाना चाहते हैं]

समुद्रगुप्त—(मानचित्र देखते हुए) महाक्षत्रप के विरुद्ध गरुड़ व्यूह की रचना उचित होगी।

महासेनापति—मेरी भी यही इच्छा है परम भट्टारक।

[सेनापति का प्रस्थान]

अहिच्छत्र महारानी—परमेश्वर परम भट्टारक, माधुरी, दत्त देवी और मैं आज युद्ध क्षेत्र में जाना चाहती हैं हमें भी आज्ञा दीजिए। मैं आज कल्याण वर्मा के विरुद्ध युद्ध करूंगी।

समुद्रगुप्त—महारानी, आप लोगों का साहस हमें उत्साह देता रहता है। हमारे साथ पर्याप्त सैनिक हैं। आपको युद्ध क्षेत्र में भेजना हमें कुछ शोभा नहीं देता।

अहिच्छत्र महारानी—तो क्या हम वलय सजाकर बैठी रहें? युद्ध क्षेत्र में भारतीय ललनाएं इस प्रकार निश्चेष्ट कैसे रह सकती हैं?

समुद्रगुप्त—शत्रु आपके स्कन्धावार पर आक्रमण कर रहे हैं। आप इसकी रक्षा कीजिए।

[स्त्रियां अस्त्र शस्त्र से सुसज्जित होकर प्रहरी का काम कर रही हैं। कुछ स्त्रियां आहत सैनिकों की परिचर्या में तल्लीन हैं]

समुद्रगुप्त—[स्कन्धावार के चारों ओर परिक्रमा लगा रहा है। अश्व पर सवार होकर संकेत द्वारा सबको प्रोत्साहन देता है। देखते २ शत्रुओं की सेना परिखा में फंस जाती है। रात्रि में मद्यप क्षत्रपों ने दलदल भूमि को यातायात का प्रशस्त मार्ग समझा। समुद्र की सेना ने आगे और पीछे, दाएं और बायें चारों ओर से आक्रमण किया। शत्रु की ध्वजा छीन ली गई। भगदड़ मच गई। समुद्रगुप्त ने सबको घेर लिया। जो शरणागत हुए वे बन्दी बना लिए गए। जिन्होंने युद्ध किया वे पकड़े गए। रुद्रसिंह, अमवेतस, कल्याण वर्मा के सैनिक पकड़े गए। समुद्रगुप्त की सेना ने शंख, मृदंग, पणव, गोमुख आदि बाजे बजाए।

वाद्यध्वनि सुनकर ककुत्सराज, यौधेयराज आदि के सैनिक द्विगुण उत्साह से लड़ने लगे। शत्रुओं ने हथियार डाल दिए। विजय चिन्ह के रूप में शंख ध्वनि होने लगी।]

समुद्रगुप्त—[प्रचारते हुए] स्वागत है क्षत्रप वीर रुद्रसिंह ! आओ आज महाक्षत्रप और भारतीय युद्ध कला की परीक्षा हो जाये।

[दोनों कुशल रीति से एक दूसरे पर प्रहार करते हैं। रुद्रसिंह आहत होकर गिरना चाहता है। समुद्रगुप्त संभाल लेता है]

समुद्रगुप्त—[अपने सैनिक से] महाक्षत्रप रुद्रसिंह को निर्विघ्न रूप से स्कन्धावार में ले जाओ। इन पर कोई प्रहार न करे।

[कई सैनिक रुद्रसिंह को अपने संरक्षण में ले जाते हैं। समुद्रगुप्त लड़ते २ अमवेतस दैवपुत्र के पास पहुंचता है]

समुद्रगुप्त—(प्रचारते हुए) देवपुत्र, आज हम दोनों की परीक्षा है। संभालो ! मैं प्रहार करता हूँ।

[ग्रमवेंतस इतना श्रान्त और क्लान्त हो गया है कि हथियार डाल देता है]

समुद्रगुप्त—क्यों देवपुत्र, बस इतनी ही है तुम्हारी वीरता !

ग्रमवेंतस—(शरण में आने का भाव दिखाते हुए)

समुद्रगुप्त—बस अब तुम अभय हो देवपुत्र !

समुद्रगुप्त—सैनिको, देवपुत्र को स्कन्धावार में ले जाओ।

[समुद्रगुप्त ऊंचे टीले पर खड़े होकर अन्य युद्धक्षेत्रों का दृश्य देखते हैं। चतुर्दिक शत्रुओं की लाशें पड़ी हैं। दूर से ध्वजा उड़ाते हुए ककुत्सराज का प्रवेश।]

समुद्रगुप्त—साधुवाद ककुत्सराज साधुवाद !

[ककुत्सराज शाही सेना की ध्वजा महाराज को समर्पण करता है]

[समुद्रगुप्त मगध के महासेनापति को आते देखकर]

समुद्रगुप्त—महासेनापति, आपने आज मगध की लज्जा बचाई। साधुवाद !

[महासेनापति क्षत्रपों की ध्वजा देता है। चन्द्रवर्मा भी बन्दी के रूप में है। मालती रक्त से लथपथ दिखाई पड़ती है। साथ ही आचार्य वसुबन्धु भी है।]

समुद्रगुप्त—(आचार्य को पहचान कर) आचार्य, आपकी यह दशा कैसी ?

आचार्य वसुबन्धु—मेरी दशा अच्छी है महाराज, मालती की दशा देखिए।

[मालती मूर्च्छित पड़ी है। दत्त देवी को समाचार मिलता है। वह दौड़ी दौड़ी आती है। मालती को गोद में उठाकर]

दत्त देवी—बहिन मालती, तुम्हारी यह क्या दशा ?

[अपने परिधान से रक्त पोंछती है]

[यौधेयराज शाहनुशाही सेना को पराजित करके उनकी ध्वजा लाते हैं।]

समुद्रगुप्त—(ध्वजा हाथ में लेकर) महाराज, आज भारती की विजय हुई।

यौधेयराज—इसका श्रेय परमेश्वर परम भट्टारक को है।

समुद्रगुप्त—इसका श्रेय प्रत्येक भारतीय को है महाराज। पर विशेष कर आपकी सुकन्या मालती को।

[समुद्रगुप्त यौधेयराज को दूर ले जाना चाहते हैं, किन्तु सहसा उनकी दृष्टि दत्तदेवी के ऊपर पड़ती है। उनके अङ्क में एक नारी लेटी है।]

यौधेयराज—[आश्चर्य चकित होकर] भगवती, हमारे पक्ष का कौन किस प्रकार आहत हुआ ? यह क्या ?

[समुद्रगुप्त दूर ले जाना चाहते हैं, किन्तु यौधेयराज का दुराग्रह देखकर उन्हें समझाते हैं]

समुद्रगुप्त—इस वीर नारी ने आज हमें विजय दिलाई है महाराज!

यौधेयराज—वह कैसे ?

समुद्रगुप्त—इसी ने अपने प्राणों की बाजी लगाकर हमें शत्रु के आक्रमण की सूचना दी।

यौधेयराज—यह है कौन ? [आवरण हटा कर] कौन ? मालती! मालती !!

तेरी यह दशा ! [रोने लगता है]

[समुद्रगुप्त के नेत्रों से भी आंसू आ जाते हैं ।]

[यौधेय राज सामने ही चन्द्रवर्मन को देख लेता है । खड्ग उठाकर उसे मारने दौड़ता है । समुद्रगुप्त पकड़ लेता है । विद्या और माधुरी भी यह लीला देख रही हैं । चन्द्रवर्मा मस्तक नत किए हुए अत्यन्त खिन्न अवस्था में बैठा है]

समुद्रगुप्त—[क्षत्रप के समीप जाकर] महाक्षत्रप, क्या कल्याण वर्मा का कुछ पता है ?

रुद्रसिंह—(धीमे स्वर में) कह नहीं सकते परम भट्टारक । इतना अवश्य है कि युद्ध से डरकर कहीं भाग गए । उनमें क्षत्रपों के समान मद्यपान का गुण था पर वीरता का नितान्त अभाव ।

[कुछ सैनिक तथा गुप्तचर कल्याण वर्मा को साथ लिए आते हैं । उनके साथ शिवानन्द भी हैं । शिवानन्द को देखकर सभी प्रणाम करते हैं]

[गाना गाते हुए आते हैं]

मां के अवयव ध्वस्त हुए हैं—
अङ्ग २ मिलने को व्याकुल,
परम वेदना से माँ व्याकुल,
युग युग से अस्वस्थ हुए हैं ।
माँ..........ध्वस्थ हुए हैं ॥

शिवानन्द—माता के ध्वस्त अङ्गों को संयुक्त करने की सामर्थ्य वाला वीर योद्धा ! आज भारत-विजय का प्रारम्भिक रूप देख कर प्रत्येक भारतीय को प्रसन्नता हो रही है । धन्य हो वीर ! (कल्याण वर्मा की ओर संकेत करके) महाराज कल्याण वर्मा आप लोगों से रुष्ट होकर मेरे आश्रम में पहुँचे । सन्यास

लेने का आग्रह कर रहे थे। मैं इन्हें समझा बुझाकर यहां लाया हूं।

अहिच्छत्र राज महिषी—(खंग संभाल कर) कायर कल्याण वर्मा !

[कल्याण वर्मा मस्तक नत किए हुए खड़ा है]

आज अभारतीय तेरे कारण भारतीयों को कायर बना रहे हैं। अरे कुल कलंक, मद्यप, संन्यास क्या हंसी खेल है कि संन्यासी बनने जा रहा था। कहीं चुल्लू भर पानी में डूब मरा होता ! तेरे कारण इतना बड़ा महाभारत हुआ !

(महाक्षत्रप की ओर त्योरी बदलते हुए) मद्यप महाक्षत्रप, तूने इसे क्यों अपने यहाँ आश्रय दिया ? क्या तू वत्स समुद्रगुप्त के शौर्य को नहीं जानता था ?

महाक्षत्रप—देवी मैं एक बार परमेश्वर परम भट्टारक का शौर्य देख चुका हूं। इन्होंने मेरे प्राण बचाए थे। उनका महान् उपकार।

अहिच्छत्र राजमहिषी—(व्यंग्यमय हंसी हंसते हुए) तुमने प्रत्युपकार रूप में यह युद्ध छेड़ा था ? क्यों महाक्षत्रप ?

रुद्रसिंह—नहीं भगवती, मैं युद्ध के लिए बिल्कुल उद्यत नहीं था। [कल्याण वर्मा की ओर संकेत करके] चन्द्रवर्मा और कल्याण वर्मा ने मुझे इस युद्ध में सम्मिलित किया। इन्होंने बताया कि परमेश्वर परम भट्टारक की साम्राज्य-लिप्सा से राजकुल व्याकुल हैं।

राजमहिषी—महाक्षत्रप, तुमने भारतीय राजाओं के कल्याण के लिए यह युद्ध छेड़ा था, और किसी उद्देश्य से नहीं ! यही बात है न ?

रुद्रसिंह—भगवती ! चन्द्रवर्मा और कल्याण वर्मा मित्र बनकर

मेरे पास आए। पर दोनों विलासी और कायर!

राजमहिषी—क्षत्रप, इन मित्रों ने तुम्हारा भला किया और तुमने इन मित्रों का! यही बात है न?

रुद्रसिंह—भगवती! आज समझ पाया हूँ कि मूर्ख मित्र से बुद्धिमान शत्रु कहीं अच्छा है! मैंने अपराध किया है परमेश्वर परमभट्टारक! मुझे दण्ड दीजिए। मैं क्षमा नहीं चाहता। [समुद्रगुप्त के सन्मुख हाथ जोड़कर खड़ा हो जाता है। शरीर काँपता है। रुद्ध कंठ से कहता है—"हाय रे मैंने क्या किया"?]

समुद्रगुप्त—दंड और क्षमा का अधिकार परिषद् को है क्षत्रप! मैं व्यक्तिगत रूप से इतना ही कह सकता हूं कि शताब्दियों से आप जिस भारत देश में रहते हैं उसकी संस्कृति से आपको घृणा क्यों? भारतीयों से द्वेष का कारण क्या है? गो, भिक्षु, ब्राह्मणों ने आप का क्या बिगाड़ा है? इनका अकारण वध क्यों करते हो?

शिवानन्द—परम भट्टारक, यह समय दार्शनिक विवाद का नहीं! [कल्याण वर्मा से] कल्याण वर्मा क्षमा माँगो अपनी श्वश्रू से। तुम्हारे कारण इस भगवती ने कितना कष्ट उठाया!

अहिच्छत्र राजमहिषी—स्वामिन! क्षमा! इस पापिष्ठ को क्षमा! इस देशद्रोही कुल कलंकी को क्षमा! जिसे देखकर पाप को भी पाप लगे, दुःख भी दुखी हो, जो भारतीयता को अपमानित करे! जिसके कारण कौशाम्बी का रक्तपात हुआ! जिसके लिये हमारे पतिदेव ने आत्म वलिदान किया, नागसेन और गणपति जैसे योद्धाओं ने रक्त बहाया, मैंने देवतुल्य परम भट्टारक का अपमान किया, वह परम अधम क्या क्षमा का पात्र है! [खड्ग संभालती है, आगे बढ़ना चाहती है। समुद्रगुप्त रोक लेते

हैं। क्रोध से दांत पीसती हुई] इस पामर को देख कर नरक भी नाक सिकोड़ लेगा। वहां भी इसे स्थान न मिलेगा। मैं मार कर भी क्या करूंगी! नारकीय कीड़े से भी अधम!

[सर्वत्र निस्तब्धता छा जाती है। राज महिषी खड्ग फेंक कर मौन हो जाती हैं। कल्याण वर्मा के नेत्रों से अश्रु धारा बहने लगती है]

[दत्तदेवी मालती का उपचार कर रही थीं। मालती ने नेत्र खोल दिये तो उन्हें अत्यन्त प्रसन्नता हुई। उसे एक कक्ष में शय्या पर सुला दिया और पंखा झलने लगी]

समुद्रगुप्त—[प्रमवेतस को देखते हुए] क्यों दैवपुत्र प्रग वेतस!

प्रमवेतस—सम्राट्!

समुद्रगुप्त—यह सम्राट् की उपाधि आपने क्यों दी।

प्रमबेतस—सम्राट् की उपाधि किसी के देने से नहीं मिलती। उसे तो वीर बाहुबल से अर्जित करते हैं। आपने समस्त देश जीत कर सम्राट् पद पा लिया। आज आप वक्षु से लौहित्य तक समस्त भारत के स्वामी हैं।

समुद्रगुप्त—शान्ति की निस्तब्ध रजनी में विश्राम के अभिलाषी भारत पर अकारण आक्रमण करने का क्या अभिप्राय था दैवपुत्र!

प्रमबेतस—सम्राट्, प्रमबेतस की भी इच्छा थी कि समस्त आर्यावर्त्त को जीतकर सम्राट् बन जाए।

समुद्रगुप्त—इस इच्छा की पूर्ति व्रात्यों और ब्रह्मण्यों के वध से किस प्रकार पूर्ण होती?

प्रमवेतस—सम्राट, भारतीय जनता को जब तक अपनी संस्कृति और सभ्यता का गर्व रहेगा हमारा राज्य स्थायी नहीं बन

सकता था, अतएव हिंसा के द्वारा भयभीत करके हम इन्हें कुशान बनाना चाहते थे।

समुद्रगुप्त—महाराज कनिष्क के वंशज होकर आपमें इतनी निर्दयता कैसे ?

ग्रमवेतस—सम्राट्, हम करुणा को कोरी कल्पना, अहिंसा को निर्बलता एवं सत्य को आडम्बर समझते हैं। ये दुर्गुण मनुष्य को उन्नत नहीं होने देते। हमारी सभ्यता में इनके लिए स्थान नहीं। इसलिए हमें किसी का वध करने में संकोच नहीं होता।

यौधेयराज—[क्रोध से कांपते हुए] असुर, अगर तेरा बध करें तो ? [खंग उठाकर लपलपाता है]

ग्रमवेतस—[सीना निकालकर] न मैं किसी का वध करने से डरता और न अपना वध होने से घबराता। आप मेरा वध करेंगे तो कुशाणों में दूसरा ग्रमवेतस पैदा होगा और मेरे बध का बदला कभी न कभी चुकायेगा। यह तो हमारी सभ्यता का चिन्ह है।

यौधेयराज—अग्नि बुझ चुकी पर उसकी दाहकता अभी तक विद्यमान है। अरे असुर ! अब भी तेरा गर्व बना है।

ग्रमवेतस—वह तो रहेगा यौधेयराज ! मेरे पराजित होने से क्या मिट जायगा ?

यौधेयराज—[खंग उठाकर] असुर, तेरा ही संहार करने को हम यहां आए हैं। हम मिटा देंगे एक एक शक को, एक एक कुशान को। पृथ्वी पर तुम्हारा चिन्ह नहीं रहने देंगे।

[ग्रमवेतस की आकृति तमतमा उठती है। भुजायें युद्ध को फड़कने लगती हैं।]

अभी तेरी आकृति पर वही क्रोध ! ठहर पामर।

[खंग उठाकर बध करने जाते हैं। समुद्रगुप्त बीच में रोक लेते हैं।]

समुद्रगुप्त—यौधेयराज, शत्रु युद्ध में जब अस्त्र शस्त्र त्याग दे तो उसका वध हत्या है। प्रमवेतस ने अपने हथियार डाल दिए थे। ऐसी अवस्था में इसे अभय दान दीजिए। स्मृतियां यही कहती हैं।

यौधेयराज—सम्राट् ! स्मृतियां हमें भारतीय का व्यवहार भारतीय के प्रति सनझाती हैं। इन असुरों के साथ स्मृति सम्मत व्यवहार अदूरदर्शिता होगी।

समुद्रगुप्त—यौधेयराज, आज भारत अभारतीय के साथ स्मृति सम्मत व्यवहार करके अन्तर्राष्ट्रीय विधान का निर्माता बनेगा। अब भारत को समस्त संसार से सम्बन्ध स्थापित करना होगा।

यौधेयराज—सम्राट, आपकी नीति व्रात्यों की है। उस नीति के कारण भारत प्रवंचित होता आया है और होगा। ये असुर शक और कुशान पुनः भारत पर आक्रमण करेंगे और हमारी सन्तान आक्रान्त होंगी।

समुद्रगुप्त—पुनः आक्रमण करेंगे तो पुनः पराजित भी होंगे महाराज ! हमारी सन्तान हमसे अधिक शक्तिशालिनी होंगी।

यौधेयराज—[खंग नीचे रखकर] आपकी जैसी इच्छा हो वही करिए। सर्प को पयपान कराइए।

[मौन धारण करके बैठ जाता है]

समुद्रगुप्त—वीर प्रमवेतस, आप अभय हैं। आप यदि प्रजा को सन्तुष्ट रख सकें तो राज्याधिकार आपका है। हमें एकमात्र

राज्य विस्तार की लालसा और साम्राज्य की लालसा नहीं। हम मानव जीवन को सुखी बनाने के अभिलाषी हैं। हमारा उद्देश्य है:—

सर्वे भवन्तु सुखिनः, सर्वे सन्तु निरामयः।

ग्रमवेतस—सम्राट्! हम आपके शौर्य से युद्ध काल में हार चुके थे। इस शान्ति काल में आपके औदार्य से पूर्ण पराजित हो गए। युद्ध में आपने हमारे शरीर पर विजय प्राप्त की, अब आपने हमारे हृदय पर अधिकार पा लिया।

[मस्तक झुकाते हुए] हम आपके चरणों में विनत होते हैं सम्राट्!

समुद्रगुप्त—[ग्रमवेतस को कंठ से लगाकर] यह क्या दैवपुत्र! आप स्वतंत्र हैं। अब जो इच्छा हो करें।

ग्रमवेतस—सम्राट्! हम सबकी एक इच्छा पूर्ण करिए।

समुद्रगुप्त—कहिए दैवपुत्र शाहानुशाही!

ग्रमवेतस—हमारी कुशान प्रथा के अनुसार विजित विजयी को राजकुमारी प्रदान करता है। आप से अनुरोध है कि आप मेरी कन्या का पाणिग्रहण करें।

समुद्रगुप्त—[चिन्तित मुद्रा में कुछ सोचता हुआ] क्या विजेता को ही कन्या के पाणिग्रहण का अधिकार है?

ग्रमवेतस—विजेता स्वयं विवाह करे या किसी राजकुल वाले से उसका सम्बन्ध करा दे।

समुद्रगुप्त—दैवपुत्र शाहानुशाही! आज मगध साम्राज्य के अधिकारी हमारे भाई कच हैं। हम उन्हीं के सेवक हैं यदि वह चाहेंगे तो विवाह संस्कार कर दिया जायगा।

प्रभवेतस—हम तो विजेता आप को जानते हैं। आप यदि स्वीकार कर लेते तो बड़ा अनुग्रह होता !

समुद्रगुप्त—आपके स्नेह का मैं आभारी हूं किन्तु मैंने एक पत्नी व्रत लिया है। भाई कच अभी अविवाहित हैं।

प्रभवेतस—(कुछ सोचकर) आपकी जो आज्ञा ! एक निवेदन और है ?

समुद्रगुप्त—वह क्या ?

प्रभवेतस—मुझे सासनी बादशाह ने बुलाया है। मैं यह देश त्याग कर जा रहा हूँ। कुभा नद से पूर्व का समस्त राज्य आपका है। इसका प्रबन्ध आप कीजिए। हम आपसे मैत्री का सम्बन्ध चाहते हैं।

समुद्रगुप्त—मैं पूर्व कह चुका हूं देवपुत्र शाहानुशाही। हमें राज्य विस्तार की उतनी अभिलाषा नहीं जितनी मानव जीवन को सुखमय बनाने की। आपकी ओर से मैं गान्धार, काश्मीर, तक्षशिला, और उद्यान राज्यों को वहां के राजाओं के हाथ में सौंप देता हूं।

प्रभवेतस—ये राज्य आपके अधिकार में है। आप जिस प्रकार चाहें इनकी व्यवस्था करें।

[रुद्रसिंह क्षत्रप सम्मुख आकर हाथ जोड़े खड़ा है]

समुद्रगुप्त—कहिए महाक्षत्रप, क्या इच्छा है ?

महाक्षत्रप—सम्राट्, मैं आपके औदार्य से प्रथम भी हार चुका था, अब आपका सेवक बनने को प्रस्तुत हूँ। सौराष्ट्र, सिन्ध आदि प्रदेश आप अपने राज्य के अन्तर्गत कर लें। मुझे अपने राज्य में कोई कार्य दें। हम अब भारतीय बनकर रहेंगे।

समुद्रगुप्त—जो आपकी इच्छा हो महाक्षत्रप ! हम तीन बार अपराधी को क्षमा करते हैं।

यौधेयराज—[कुछ बड़बड़ाते हैं] ठीक है ! एक दिन भारत को सम्राट् की अदूरदर्शिता का फल चखना पड़ेगा।

[मालती स्वस्थ हो जाती है। दत्त देवी उसे लेकर आती हैं। उसे जीवित देखकर सबकी आकृति पर प्रसन्नता छा जाती है]

समुद्रगुप्त—देश रक्षिका मालती ! आप कैसी हो ?

मालती—नव जीवन पाया सम्राट् !

———

पांचवां अंक

[प्रथम दृश्य]

[साकेत के राजोद्यान में एक लता कुंज है। उसके चतुर्दिक् श्वेत शिला के आसन बने हैं, वहां से सरजू नदी की निर्मल धारा स्पष्ट दिखाई पड़ती है। सन्ध्या की अरुणिमा सरजू के सिकता प्रदेश को रंजित कर रही है। सरिता की रजत वारिधारा स्वर्ण किरणों के साथ कलोल करती हुई प्रवाहित हो रही है।

एक भिक्षुणी उद्यान की शोभा देखते हुए लता कुंज के समीप श्वेत शिला पर बैठ जाती है। उसके सन्मुख लता कुंज में एक कपोत युग्म कल्लोल करता हुआ उद्यान की निस्तब्धता के साथ साथ भिक्षुणी की मनः शान्ति को भंग कर रहा है।

भिक्षुणी की हृदय वीणा के तार अतीत स्मृतियों के द्वारा ऐसे कसे थे कि कपोत कल्लोल का स्पर्श पाते ही झंकृत हो उठे। भिक्षुणी उन स्वरों से स्वर मिलाती हुई बोल उठी:—

भूल गई मैं सुगम सुपथ को,
    मन तुरंग मन माना चल कर,
    गहन गर्त्त में मुझे पटक कर,
लिए भागता जीवन रथ को,
भूल गई मैं सुगम सुपथ को।
    क्रूर नियति ने पास बुला कर,
    प्रलय-धार में मुझे बहा कर,
साध लिया अपने स्वारथ को,
भूल गई मैं सुगम सुपथ को।

छाया री नैराश्य अन्धेरा,
कहीं नहीं खद्योत उंजेला,
हार चुकी निज संचित गथ को,
भूल गई मैं सुखमय पथ को।
मेरी दीन दशा पर क्षण क्षण,
रजनी बरसाती आंसू कण,
भग्न देखकर दिव्य सुरति को,
भूल गई मै सुगम सुपथ को।
हृदय-वेदने ! अब तू सोजा,
स्वप्न लोक में अब तू खोजा,
नहीं जानती नीति जगत को,
भूल गई मैं सुगम सुपथ को।

[साम्राज्ञी दत्तदेवी एक झुरमुट में खड़ी हुई हैं और भिक्षुणी मालती का गाना सुन रही हैं। गाना समाप्त होते ही पीछे से जाकर मालती की आंखें बन्द कर लेती हैं। मालती साम्राज्ञी के अंगों को टटोलती है। वेणी पकड़ने पर अनुमान के द्वारा पुकार उठती है—साम्राज्ञी !। दत्त देवी आंखों पर से हाथ हटा लेती हैं और मालती का हाथ पकड़ कर उसी आसन पर बैठ जाती हैं।]

दत्तदेवी—भगवती ! आपने मुझे कैसे पहचाना !

मालती—साम्राज्ञी को कौन नहीं पहचानेगा ?

दत्तदेवी—किन्तु आपको पहचानना सबसे सरल है।

मालती—वह कैसे ?

दत्तदेवी—आपके लम्बे काषाय परिधान से।

मालती—[उदासीनता के भाव से] किन्तु काषाय के द्वारा काषाय

धारियों को पहचानना सरल नहीं है साम्राज्ञी !

[विचार मुद्रा मौन हो जाती है।]

दत्तदेवी—हां भगवती, शाकल के युद्ध में जिस वीरता से आपने देशरक्षा की थी वह एक क्षत्रियाणी के लिए भी अनुकरणीय है। कौन कहेगा कि एक भिक्षुणी ऐसा पराक्रम कर सकती है।

मालती—साम्राज्ञी, आपसे यह किसने कहा ?

दत्तदेवी—आचार्य वसुवन्धु जी ने इसका संकेत मात्र किया था, किन्तु सम्राट् तो आपकी भूरि भूरि प्रशंसा करते हैं।

मालती—साम्राज्ञी, आप मुझसे विनोद करने का बहाना निकाल लेती हैं।

दत्तदेवी—भगवती, अच्छा यदि मैं विनोद कर रही हूं तो आप ही तथ्य बताइये। आप का शरीर क्षत जर्जरित कैसे हो गया था ? बौद्ध भिक्षुणी ने शस्त्र धारी चन्द्रवर्मा को कैसे पराजित किया था ?

मालती—साम्राज्ञी, भूल जाइए उन बातों को ! मैं स्वतः चकित हूं कि उस दैत्य का सामना मैंने कैसे किया ?

दत्तदेवी—भगवती, सम्राट् को भी आश्चर्य होता है। आपको कहाँ से इतनी शक्ति प्राप्त हो गई थी ? बताइए न ?

मालती—क्यों आग्रह करती हैं साम्राज्ञी !

दत्तदेवी—नहीं भगवती आज मैं आपको जाने न दूंगी। आप उस घटना का पूरा वृत्तान्त सुनाइए।

(मालती के दोनों हाथ पकड़ कर अपनी मुट्ठी में दबा लेती है)

मालती—अश्वमेध के इस सुखमय अवसर पर एक परित्यक्ता भिक्षुणी की करुण कथा सुनने का अवकाश साम्राज्ञी को कहां ? मैं एक दीना हीना भिक्षुणी !

दत्तदेवी—भगवती, आप बातें न बनाइए। इस भिक्षुणी की गाथा इतिहास की अमर कहानी बनेगी। सुनाइए ! शाकल में चन्द्र वर्मा ने क्या किया ?

मालती—साम्राज्ञी, क्या आप नहीं मानेंगी ?

दत्तदेवी—नहीं ! नहीं ! नहीं ! आपको सुनाना ही होगा।

मालती—चन्द्रवर्मा ने हमारे बौद्ध विहार के चतुर्दिक् कठोर पहरा लगा दिया था।

दत्तदेवी—क्यों ?

मालती—उसे भय था कि मैं कहीं भाग न जाऊं !

दत्तदेवी—क्या उसने विहार में आप का पता न लगाया ?

मालती—मैंने वेश बदल दिया था।

दत्तदेवी—आपने वेश बदल लिया था तो विहार से भागकर क्यों निकल क्यों न आईं ?

मालती—सम्राट् के गुप्तचरों ने कई बार मुझसे भागकर निकलने को कहा किन्तु मैंने इसे कायरता समझी। जब विराम सन्धि हो गई तो मैं निश्चिन्त हो गई।

दत्तदेवी—फिर क्या हुआ ?

मालती—किसी प्रकार चन्द्रवर्मा को मेरा पता लग गया। एक दिन जब मैं तथागत का दर्शन करके आ रही थी तो मैंने चन्द्रवर्मा को देखा। मैं किसी प्रकार निकल जाना चाहती थी और

उद्यान के झुरमुट में छिपने लगी तो वह मेरा पीछा करता हुआ आ पहुँचा। उसकी विकृत मुद्रा, आँखों की प्यास तथा स्वर भंगी देखकर मैं कांप उठी, किन्तु सम्राट् की वीर मुद्रा का ध्यान आते ही मुझमें पुरुषार्थ आ गया। मैंने साहस संकलित करके उससे वार्तालाप किया। उसके मनोनुकूल बातें कीं। विवाह के प्रस्ताव पर विचार करने का अवसर माँगा।

दत्तदेवी—फिर क्या हुआ ?

मालती—उसी दिन सन्ध्या समय वह फिर आया। मैंने उसकी रुचि का ध्यान रख कर फिर बातें की। मद्यप तो वह था ही। उसे भली प्रकार आसव पिलाया! क्रमशः वह मद में आने लगा। मैंने शकों और कुशानों के युद्ध की बातें की। सम्राट् के साथ युद्ध की आयोजना पूछी। उसने समझा कि सम्राट् का अहित मुझे अभीष्ट है, इसलिए अपनी सारी योजनाएं बताता गया। उसी रात्रि को निशीथ वेला में सम्राट् को असावधान समझ कर आक्रमण होने वाला था। मैंने धीरे से उसकी राजमुद्रा ली। एक गूढ़ लेख्य एक भिक्षु के द्वारा सम्राट् के पास भेज दिया। राजमुद्रा होने से क्षत्रपों को संदेह भी न रहा। इस प्रकार सम्राट् को अपनी विपत्ति और आक्र-मण का समाचार भेज कर मैं चन्द्रवर्मा से बातें करने लगी।

दत्तदेवी—भगवती, आपका साहस !

मालती—मेरी विपत्ति अब वृद्धिप्राप्त होने लगी। उस रात्रि में एक असुर आसुरी वृत्ति की तृप्ति के लिये मेरे सामने पड़ा था। विहार की प्राचीरें क्षत्रप सैनिकों से भयभीत होकर सिहर रही थीं। एक दीपक मेरे कक्ष में मेरी दशा देखकर विकंपित हो उठता था। साम्राज्ञी! वह दृश्य!

दत्तदेवी—भगवती, आपने किस प्रकार धर्म की रक्षा की ?

मालती—साम्राज्ञी, मुझे ऐसा प्रतीत होता था कि सम्राट् की वीर मूर्ति परशु तोमर लिए मेरे सामने विद्यमान है। जब वह असुर अपना हाथ मेरे कलेवर की ओर बढ़ाता मैं उसे किसी युक्ति से दूसरी बातों की ओर ले जाती। मैं बाहर कोलाहल की प्रतीक्षा कर रही थी। मैं जानती थी कि सम्राट् के योद्धा अवश्य मेरी रक्षा करेंगे।

दत्तदेवी—क्या उस असुर ने दुराग्रह नहीं किया ?

मालती—दुराग्रह तो वह करता ही था किन्तु मैंने अपना धैर्य नहीं त्यागा। अन्त में निराश होकर वह उठा और मेरे साथ बलात्कार करना चाहा। मैंने उसकी गर्दन पकड़ी और एक पछाड़ दी। अब वह चिल्लाने लगा—"सैनिको, हथियार लाओ"—दो सैनिक द्वार खटखटाने लगे, मैंने भर्त्सना किया। जब वह असुर बहुत चीत्कार करने लगा तो सैनिकों ने द्वार तोड़ दिया। अन्दर प्रविष्ट हो गए। बाहर कोलाहल मच चुका था। मैंने उन सैनिकों को वर्जित किया। वे दूर हटने लगे। सैनिकों को देखकर उस असुर का साहस बढ़ा। वह मेरे ऊपर हथियार चलाने लगा। उस समय अन्ध अहिंसा के सिद्धान्त की भ्रामकता मेरी समझ में आई। उसने मेरा शरीर क्षत विक्षत कर दिया। मैं उसे दांतों से काटती रही। किन्तु वह बार बार प्रहार करता ही रहा। तब मैंने भी एक अस्त्र उठा लिया। उससे युद्ध करने लगी। वह मद्यप क्या कर सकता था। किन्तु बाहर के कोलाहल के कारण उसके प्राण बचाने वाले कई सैनिक आ गए।

दत्तदेवी—ऐसी दशा में आपके प्राण किस प्रकार बचे ?

मालती—सम्राट् के सैनिक पहुँच गए। उन्होंने सैनिकों को धराशायी कर दिया और चन्द्र वर्मा को वन्दी बना लिया।

दत्तदेवी—धन्य हो भगवती ! अपने देश की रक्षा की है ! तभी आपकी प्रशंसा सम्राट् किया करते हैं।

मालती—आप अत्यन्त भाग्यवती हो सामाज्ञी ! आपने उस देवता को बर पाया है जिसकी स्मृति से वीरता वशीभूत हो जाती है।

दत्तदेवी—भगवती ! मैं चाहती हूं कि मेरे भाग्य में आप भी सम्मिलित हो जायें।

मालती—आपके प्राप्य पर दूसरों का भाग कैसा साम्राज्ञी ? मैं उस सुगम सुपथ को भूल गई। मैं भिक्षुणी !

दत्तदेवी—भगवती ! क्या आप जानती हैं कि सम्राट् के हृदय में आपके प्रति कितनी ममता है। एरण के युद्ध से आज तक तुम्हारी स्मृति आते ही वह भाव-विभोर हो उठते हैं। मैंने आपका अधिकार अपहरण किया है ! आप उनको धर्म सहचारिणी बन जायें तो हम तीनों के अन्तःकरण से कसक निकल जाये।

मालती—साम्राज्ञी, आपका इतना विशाल हृदय है तभी तो सम्राट् जैसा पति मिला। आप धन्य हैं। (कुछ रुककर) मेरी प्रेम कहानी का अध्याय समाप्त कर दीजिए साम्राज्ञी ! जब कभी अन्तःकरण रुदन करता है, उसके स्वर में स्वर मिलाती हुई गाने लगती हूँ। उस संगीत में वेदना लय हो जाती है। हृदय की कचोट में एक सुख मिलता है, एकाकी जीवन की व्याकुलता में अनिर्बचनीय दशा बन जाती है। सहन करते करते चिर सहचर दुख भी सुख सा प्रिय बन गया है। उसी

की अनुभूति करने दीजिए साम्राज्ञी !

[कुमार देवी, शिवानन्द, वसुबन्धु, समुद्रगुप्त और हरिषेण का प्रवेश होता है। दत्तदेवी और मालती खड़ी हो जाती हैं। सब लोग शिलासन पर विराज मान होते हैं]

शिवानन्द—साम्राज्ञी, अश्वमेध यज्ञ के समस्त साधन प्रस्तुत हो गए ? यज्ञकर्त्ता ब्राह्मण और यज्ञ सामग्री विधिवत् उपस्थित हैं न ?

दत्तदेवी—केवल एक सामग्री शेष रह गई है योगिराज !

शिवानन्द—वह क्या ?

दत्तदेवी—एक तपस्विनी को उसके जीवन भर की तपस्या का फल मिलना !

शिवानन्द—क्या मालती की ओर संकेत है ?

दत्तदेवी—हां योगिराज !

शिवानन्द—फल प्राप्ति में विघ्न क्या है ?

दत्तदेवी—मालती कह रही हैं कि मैं भिक्षुणी हो गई। फल प्राप्ति के सुगम सुपथ को भूल चुकी। अब विवाह क्या करूंगी !

शिवानन्द—दिन का मार्ग भूला पथिक यदि सन्ध्या तक घर लौट आए तो वह भूला नहीं कहलाता। क्यों मालती ?

मालती—अभी सन्ध्या कहां है योगिराज, जीवन मध्याह्न के पूर्व तक पहुँची हूं।

शिवानन्द—यह तो और भी आनन्द का विषय है ! मध्याह्न के पूर्व ही घर पहुँच गई हो !

मालती—मैं भिक्षुणी हूं योगिराज ! विवाह हमारे धर्म पालन में बाधक होता है।

शिवानन्द—स्त्री के लिए प्रथम विवाह कभी किसी धर्म का घातक नहीं। इसके प्रतिकूल विवाह से वंचित रहना ही जीवन की अपूर्णता का द्योतक। नारी पुरुष बिना पूर्ण हो ही नहीं सकती।

(कुछ देर मौन धारण करके, किन्तु भिक्षुणी को समझाने का अधिकार वसुबन्धु को है।)

वसुबन्धु—मालती, विवाह करना न करना यह आचार की बात है। आचार का प्रासाद विचार की दृढ़ भित्ति पर खड़ा होता है। यदि विचार अस्थिर हों तो आचार की सुव्यवस्था सम्भव नहीं। वाह्य अनुष्ठानों में धर्म के हृदय की उपेक्षा उचित नहीं। भगवान तथागत ने जिस वाह्याडम्बर को मिटाने का प्रयास किया, वही आज बौद्धों में स्थान जमाए बैठा है।

मालती—भन्ते, आप ही कहा करते हैं कि आचार बुद्ध-धर्म की पीठ है।

वसुबन्धु—किन्तु वह पीठ विचार की दृढ़ भूमि पर स्थिर है। यदि पीठ के निम्न भाग से धरातल ही दब जाय तो आचार किस प्रकार दृढ़ रहे ?

मालती—भन्ते, मेरे योग्य मार्ग बताइए।

वसुबन्धु—मालती, क्या तुम जानती हो महायान बुद्धपद प्राप्ति के लिए एक विशेष साधना बतलाता है-बोधिचर्या !

मालती—जानती हूं भन्ते !

वसुबन्धु—यह भी जानती हो कि बोधिचर्या का आरम्भ बोधि चित्त ग्रहण से होता है ?

मालती—जानती हूँ भन्ते !

वसुवन्धु—बोधि चित्त ग्रहण के लिए सात प्रकार की पूजा का विधान है:—वन्दन, पूजन, पाप-देशना इत्यादि। तुम्हें स्मरण होगा कि पाप-देशना (प्रकटी करण) के द्वारा प्राचीन पापों का शोधन हो जाता है। क्या स्मरण है ?

मालती—स्मरण है भन्ते !

वसुवन्धु—अतएव आज तुम अपनी तपस्या के बल से तीसरी सीढ़ी पर पहुँच गई हो! मेरा विश्वास है कि इसी प्रकार निर्मल चित्त से वाह्याडम्बरों को त्याग तुम आराधना करती रहोगी तो समस्त प्राणियों के दुःख प्रशमन के लिए तुम्हारे अन्दर बोधि चित्त का प्रकाश हो जायगा। इस कारण विवाह तुम्हारा कल्याणकारी है। आज तुम अपना हृदय टटोलो। देखो, उस दर्पण में किसका प्रतिबिम्ब झलकता है। इसके द्वारा पाप देशना क्रिया पूर्ण होती है।

[मालती विचार मुद्रा में पड़ी है]

दत्तदेवी—भगवती, आप चुप क्यों हैं ?

मालती—भन्ते, इस हृदय में सम्राट् के अतिरिक्त न कभी कोई आया और न वह सौम्य मूर्ति कभी बाहर निकली। बुद्ध की उपासना करते समय भी नेत्र उसी मूर्ति को देखते थे, आचार्य के उपदेशों को सुनने से कान भागते थे।

वसुवन्धु—मालती इतना कहना पर्याप्त है। तुम्हारे लिए विवाह परम मंगलकारी होगा।

मालती—किन्तु भन्ते, कामना के आवर्त्त में अब न डुबाइए। क्या मैं एक निष्काम भक्त के समान हृदय सिंहासन पर सम्राट् को

प्रतिष्ठित करके उपासना नहीं कर सकती ? विवाह ही क्यों आवश्यक है ? मैं सम्राट् को आत्मार्पण कर चुकी हूं। यह उत्सर्ग केवल उत्सर्ग के लिए है। आदान-प्रदान की भावना से नहीं।

शिवानन्द—मालती, कामना के आवर्त्त में फंसाने वाला विवाह काम विवाह कहलाता है। तुम्हारा यह विवाह धर्म विवाह होगा।

मालती—धर्म विवाह क्या योगिराज !

शिवानन्द—इस धर्म विवाह में सम्राट् की आराध्य मूर्त्ति की आराधना करते हुए तुम्हें उनके साथ विश्व मंगल के कार्यों में तल्लीन होना होगा। कालान्तर में उसी आराध्य देव के साथ साथ विश्व नियन्ता की मूर्त्ति भी स्थापित हो जायगी और लौकिक प्रेम अलौकिक प्रेम में परिणत होकर तुम्हें परिपूर्ण बना देगा।

मालती—जो आज्ञा देव !

शिवानन्द—साम्राज्ञी, अब क्या चाहती हो ?

दत्तदेवी—मैं सम्राट् से निवेदन करती हूं कि जिस तपस्विनी का स्वत्व मैंने अपहरण किया है उसको भी मेरी बहिन बनने का अधिकार प्रदान किया जाय।

समुद्रगुप्त—योगिराज, मैंने एक-पत्नी-व्रत लिया है। इस व्रत को भंग करना क्या उचित है ? [मौन धारण कर लेता है। सब लोग चुप हो जाते हैं।]

हरिषेण—सम्राट्, आप इतने विचार-मग्न क्यों ?

समुद्रगुप्त—युद्ध क्षेत्र का कोलाहल और द्वन्द आज हृदय-क्षेत्र में

प्रविष्ट हो गया है कविराज। आज एक नया युद्ध छिड़ गया है। नया समरांगण बन गया।

हरिषेण—आप समस्त समरांगणों के विजेता हैं सम्राट्!

समुद्रगुप्त—समस्त युद्धों में आप वीरों की सहायता थी कविराज! मैं क्षुद्र प्राणी क्या करता, किन्तु इस युद्ध में आप लोग मुझे एकाकी भेज रहे हो।

शिवानन्द—सम्राट्, उस युद्ध को शान्त करने के लिए ही मालती जैसी वीर नारी को भेज रहे हैं। आप एकाकी क्यों! वह आपकी धर्मस्थ पत्नी नहीं, धर्मीय पत्नी बन रही है।

समुद्रगुप्त—योगिराज, अब साम्राज्य को देश-देशान्तर व्यापी निर्धनता, रोक-शोक-सन्ताप, अधर्म तथा अशिक्षा के विरुद्ध युद्ध छेड़ना है।

आपने साम्राज्य निर्माण में जिस प्रकार पथ-प्रदर्शन किया उसी प्रकार इस महायज्ञ में मार्ग दिखाइए। और आशीर्वाद दीजिए। योगिराज!

शिवानन्द—सम्राट्, आपने दत्ता देवी के द्वारा उत्तरापथ और दक्षिणापथ को संयुक्त किया। आज आप मालती के पाणि ग्रहण द्वारा व्रात्य और ब्रह्मण्य संस्कृतियों को मिलाने जा रहे हैं।

समुद्रगुप्त—वह कैसे देव?

शिवानन्द—महायान भक्तिप्रधान बन गया है। अब उस अङ्ग को साथ लेकर जगत को परम भागवत धर्म का ज्ञान कराना होगा। इस धर्म से आर्त्त प्राणि भक्ति गङ्गा में स्नान करके शान्त होंगे। निकट भविष्य में व्रात्य और भागवत धर्म दूध

और मधु के सदृश मिल जायेंगे। इस प्रकार भारत में सनातन धर्म एक नए कलेवर में आकर संसार का कल्याण करेगा।

समुद्रगुप्त—वह कैसे योगिराज, वह नया रूप कैसा होगा ?

शिवानन्द—अश्वमेध यज्ञ समाप्तप्राय है सम्राट्! इसकी समाप्ति के शुभ अवसर पर मैं अपनी योजना रक्खूंगा। देश देशान्तर के विद्वान राजा महाराजा, साधु महात्मा उपस्थित होंगे। सनातन धर्म के नए रूप पर वे विचार करेंगे।

समुद्रगुप्त—आपकी जो आज्ञा देव!

[दत्त देवी मालती को चीनांशुक का उत्तरीय पहनाती है। उसे सम्राट् के समीप ले जाती है।]

मालती—आर्य पुत्र!

सम्राट—प्रिये!

पचंम अंक

[द्वितीय दृश्य]

[साकेत नगरी में अश्वमेध यज्ञ की पूर्णाहुति होने वाली हैं। उत्तरापथ, दक्षिणापथ के समग्र राजा-महाराजाओं के अतिरिक्त काम्बोज, चम्पा, मलय, यवद्वीप, श्याम आदि देशों से प्रतिनिधि आए हुए हैं। साकेत अमरावती के सदृश सुसज्जित है। नगर की मरकत, वैदूर्य आदि जटित अट्टालिकायें सूर्य रश्मियों से दमक रही हैं। राजपथ पर जड़ी हुई मरकत मणियों के कारण पशुओं को घास का भ्रम हो जाता है।

संसार के विभिन्न भागों से प्रतिनिधिगण आए हैं। उसके विविध वेश हैं। वे मंच पर बैठे हैं। यज्ञशाला का रत्नजटित विशाल मंडप छटा दिखा रहा है। एक ओर अग्निकुन्ड है जहां ब्रह्मा, अध्वर्यु, उग्दाता और होता यज्ञ कर रहे हैं। यज्ञ मंडप के समीप एक ओर राजन्यवर्ग है। वे लोग कौशेय वस्त्र पहने विविध अलंकारों से शोभायमान है। दूसरी ओर वल्कल वस्त्रधारी मुनि समाज है जिनकी श्वेत जटाएं लटक रही हैं। उनके पीछे वेद वेदांग पारंगत ब्राह्मण मस्तक पर चन्दन लगाए विराजमान हैं। उनके साथ दूसरी पंक्ति में हीन यान सम्प्रदाय के आचार्य मनोरथ और संघभुद्र हैं साथ ही महायान सम्प्रदाय के आचार्थ स्थिरमति और दिङ्नाग है। हवन कुन्ड से सुगंधित धूम निकल रहा है। वेद मंत्रों से समस्त मंडप गुंजरित हो उठता है।

समीप ही यज्ञ स्तूप है। उसके पास श्यामकर्ण घोड़ा खड़ा है जो दिग्विजय के रूप में प्रत्येक दिशा से घूम आया है।

मंडप के सम्मुख विस्तृत मैदान में पयस्विनी गायें घूम रही हैं। ये गायें दानार्थ लाई गई हैं। यज्ञ कार्य समाप्त होने पर प्रत्येक राजा सम्राट् के सामने अपने २ राज्य का उपहार उपस्थित करता है। मंडप

रत्नराशि से जाज्वल्यमान हो उठा है । मागध, सूत और बन्दीगण संगीत के साथ सम्राट् का गुणगान कर रहे हैं ।

मंडप के मध्य में गरुड़ ध्वज फहरा रहा है ।]

[साकेत के मागधों का गान]

वैभव से सजकर मानवता, प्रथम बार मुसकाई ।
जगती के पावन प्रदेश साकेत नगर में आई ।
द्विज समाज मुनि सिद्ध देवगण करते चले बड़ाई ।
धर्म राज योद्धा समुद्र को दस दिशि मिले बधाई ।

[साकेत के मागधों का प्रस्थान]

[गान्धार के मागधों का गान]

जिसका विमल सुयश ले जाता, पवन महासागर के पार ।
दिक् दिगन्त से लाते राजा, जिसके हित नाना उपहार ।
समरांगण में विजय वाहिनी, जिसकी कभी न रुक जाती ।
शक कुशान से दुर्दम रिपु की, जहाँ ध्वजा झट झुक जाती ।
ललित कलाओं का जो प्रेमी सकल शास्त्र का है ज्ञाता ।
जिसके परम उदात्त चरित से स्वर्ग लोक भू पर आता ।
भारत की गरिमा को जिसने उच्चासन पर बिठलाया ।
रघु के द्विग्विजयों की स्मृतियां कलियुग में फिर ले आया ।
उसकी परम अलौकिक प्रतिभा देख शारदा सुख पाती ।
उसके गुण पर रीझ लक्ष्मी नित धन सम्पति बरसाती ।

हरिषेण—

है समुद्र मानव अचिन्त्य सुर सार रूप धर आया ।
जो असाधु को प्रलय साधु को उदय, तेज बल लाया ॥
इन्द्र शक्ति में वरुण न्याय में, जो अजेय अन्तक सा ।
वीणा में नारद सम रस, जिसकी कविता में बरसा ॥

समवेत स्वर में—

वैभव से सजकर मानवता, प्रथम बार मुसकाई।
जगती के पावन प्रदेश साकेत नगर में आई॥

[संगीत बन्द होता है। सम्राट् दत्त देवी और मालती के साथ सिंहासन पर बैठते हैं। सम्राट् माता का चरण स्पर्श करते हैं। कृशकाय कुमार देवी कम्पित करों से सम्राट् को आशीर्वाद देना चाहती हैं।

सम्राट् कच की माता का चरण-स्पर्श करते हैं। वह भी उल्लसित हो कर आशीर्वाद देती हैं। उल्लास के वेग से कुमार देवी के नेत्रों में आंसू भर आते हैं। उनका शरीर गद्गद हो रहा है। वाणी नहीं निकलती है। दर्शकगण यह छटा देखकर मुग्ध हो जाते हैं।]

सम्राट्—[खड़े होकर] पूज्य ऋषि महर्षियों, श्रमण भिक्षुओं, वृहत्तर भारत के राजन्यवर्ग, प्रतिनिधिगण तथा नागरिको, आप लोगों के सहयोग से यह अश्वमेध यज्ञ निर्विघ्न समाप्त हो गया।

[सम्राट् की जय जयकार से मंडप गूंज उठता है]

सर्व प्रथम मैं उन भारशिव और वाकाटक महाराजाओं को श्रद्धांजलि अर्पण करता हूं जिन्होंने भारत के विध्वस्त अंगों को संयुक्त करने का सर्वप्रथम प्रयास किया। जिन्होंने हमारी प्राचीन संस्कृति के अनुसार दश अश्वमेध यज्ञ करके भावी सन्तान को एकता का मार्ग दिखलाया।

[सम्राट् समुद्रगुप्त की जय जयकार होती है]

तदुपरान्त उन वीर सैनिकों को श्रद्धांजलि देना अपना कर्त्तव्य समझता हूँ जिन्होंने देश हित युद्ध क्षेत्र में रक्त बहाकर वीर गति पाई। मुझे उनके भाग्य पर ईर्ष्या होती है।

महामात्य—वह क्यों सम्राट् !

सम्राट्—सोचता हूं कि जननी जन्म-भूमि की सेवा में मैं भी वीर गति को प्राप्त किए होता तो आज उन योद्धाओं के समान स्वर्ग लोक में बैठा होता।

महामात्य—सम्राट्, आपने अपने उदात्त चरित्र से स्वर्ग लोक को ही भूतल पर आने के लिए वाध्य किया है।

[सम्राट की जय जयकार होती है ।

सम्राट्—मेरे जीवन का यही ध्येय रहा है कि स्वर्ग को भूतल पर आने के लिए वाध्य किया जाय, किन्तु इसके लिए एक विशेष प्रकार का युद्ध आवश्यक है।

महामात्य—कैसा युद्ध सम्राट् ?

सम्राट्—भूतल पर रोग-शोक, दुख-सन्ताप, द्वेष-वैमनस्य, अनाचार-अत्याचार, संकीर्णता-हीनता, क्लेश-कलह आदि दुर्गुण दानव के समान मानव जीवन को पीड़ित कर रहे हैं। अब हमें इस के विरुद्ध युद्ध छेड़ना है। क्या आप इसके लिए प्रस्तुत हैं ?

जनता—प्रस्तुत है सम्राट् ! आप इन पर भी विजय प्राप्त करेंगे।

सम्राट्—शस्त्रधारी शत्रुओं से लड़ने में मेरे सैनिकों और शासक-वर्ग ने प्रमुख भाग लिया और नागरिक सहायक बने रहे। इस नवीन युद्ध में जनता को मुख्य कार्य करना है, शासक-वर्ग सहायक मात्र रहेगा।

महामात्य—सम्राट्, आप हमारा पथ प्रदर्शन करिए। हम इस युद्ध में भी विजयी होंगे।

सम्राट्—यह युद्ध अध्यात्म-क्षेत्र में लड़ा जायगा। अतएव इसका पथ प्रदर्शन आध्यात्मिक महापुरुष को करना चाहिए। योगि-

राज से हमारा निवेदन है कि इस युद्ध का संचालन करें।

शिवानन्द—विश्वनियन्ता को कदाचित् वसुधा में पृथ्वीतल प्रिय हुआ, क्योंकि सृष्टि का विस्तार और जीवों का निर्माण सर्व प्रथम यहां ही हुआ। इस जगती में भी भारत देश उसे सर्व प्रिय जान पड़ा, क्योंकि उसने इसकी रचना में सबसे अधिक कौशल दिखलाया है। इस कारण भारतवर्ष से विश्व नियन्ता समय समय पर महत्वपूर्ण कार्य कराता आया है। राम कृष्ण और बुद्ध के द्वारा उसने मानवता का दुःख मिटाया है।

इस भूतल पर जब दुःख फैल रहा था, भगवान बुद्ध ने करुणा का एक स्रोत निकाला, जो कालान्तर में प्रवाह बन गया। उसमें स्नान करके लक्ष लक्ष प्राणी सन्ताप से मुक्त हो गए। किन्तु देश काल और समाज की परिस्थितियों में घोर परिवर्तन होने के कारण वह प्रवाह मन्द पड़ गया। उसमें अधिक प्राणियों को शीतलता प्रदान करने की शक्ति न रही। वह मन्द प्रवाह हीनयान महायान नामक दो शाखाओं में बंट गया। आज दोनों शाखाओं के दिग्गज आचार्य हमारे मध्य विराजमान हैं। बुद्ध भगवान के द्वारा प्रवाहित प्रवाह को मन्द देखकर भारशिव और बाकाटक राजा पैदा हुए। भारत माता के ध्वस्त अवयवों को दुर्दशाग्रस्त देखकर उन्हें चिन्ता हुई। विदेशियोंका अत्याचार उन्हें लड़ने को वाध्य करने लगा। अतएव उन्होंने भगवान शंकर का आवाहन किया। देश में एकता स्थापित करने के लिए त्रिशूल उठाया। शत्रुओं को पराजित किया और राज्य के अधिपति होते हुए शंकर के समान गृह-विहीन बने रहे, स्वर्ण राशि होते हुए भी भस्म का आभूषण पहना, विशाल वैभव मध्य शरीर को अर्द्ध-नग्न रखकर तपोमय जीवन बिताया। उन्होंने दस अश्वमेध यज्ञ किये और देश में ऐक्यभवन निर्माण

का शिलान्यास किया।

उन्हों ने भारत एकता का जो कार्य प्रारम्भ किया उसकी परिसमाप्ति आज सम्राट् द्वारा हुई है। अब भारत ही नहीं प्रत्युत बृहत्तर भारत के नव निर्माण के द्वारा सारी वसुधा का कल्याण होने जा रहा है। इस दशा में भारत का विशेष उत्तर दायित्व है।

सम्राट् ! क्या आप उस उत्तरदायित्व का भार लेने को प्रस्तुत हैं ?

सम्राट्—आपकी जो आज्ञा हो योगिराज ! मैं सदा सन्नद्ध हूं।

योगिराज—अब तक हम वैभव से विराग धारण करते रहे हैं। अब वैभव विराग ग्रहण करना होगा। मैं शिव का उपासक होकर कहता हूं कि अब भारत को परम भागवत धर्म की ओर अग्रसर होना है। भगवान कृष्ण के बताए गीता धर्म से ही भारत और जगत का कल्याण होगा।

सम्राट्—वह कैसे योगिराज !

योगिराज—सम्राट्, अश्वमेध यज्ञ सम्पन्न करके जो स्थान सम्राट् समुद्रगुप्त को प्राप्त हो सकता है, वही स्थान एक अस्पृश्य को विष्णु भगवान के भजन द्वारा मिल सकता है। यह है वैष्णव धर्म की समदर्शिता। इस धर्मराज्य में स्पृश्य अपृश्य, राजा रंक, मूर्ख पंडित, स्त्री पुरुष, देशी-विदेशी सबका समान स्थान है।

सम्राट्—व्रात्य इस धर्म को क्यों मानेंगे योगिराज !

शिवानन्द—व्रात्यों के विषय में आचार्य वसुबन्धु अभी अपने विचार प्रगट करेंगे।

वसुबन्धु—सम्राट, हमारा महायान धर्म भक्तिप्रधान ही है। भक्ति के द्वारा निर्वाण सबसे सुगम है। मेरा विश्वास है कि यदि परम भागवत धर्म उन्नत होता गया तो हमारे देश में व्रात्य और ब्रह्मण्य एक बन जायेंगे।

[जनता में प्रसन्नता के कारण हर्षध्वनि होने लगी। आचार्य वसुबन्धु की जय जय कार से मंडप गूंज उठा]

शिवानन्द—वैष्णव धर्म किसी जाति विशेष या देश विशेष का धर्म नहीं, यह तो मानव जाति का धर्म है।

सम्राट्—वह कैसे योगिराज !

शिवानन्द—मानव जाति की स्वाभाविक मनोवृत्ति प्रवृत्ति मार्ग की ओर जाती है। निवृत्ति मार्ग कष्ट साध्य होता है। गीता हमें प्रवृत्ति मार्ग दिखलाती है, पर उस मार्ग में कई विशेषताएं हैं।

सम्राट्—वह क्या योगीराज !

शिवानन्द—कर्म करते हुए भी कर्म में आसक्ति नहीं रखनी होगी। राज्य करते हुए राजा जनक के समान विरक्त रहना होगा। अनुरक्ति से विरक्ति नहीं प्रत्युत अनुरक्ति में विरक्ति रखनी होगी।

सम्राट्—दूसरी विशेषता योगिराज !

शिवानन्द—कर्म करते हुए कर्म फल की लालसा न करनी होगी।

सम्राट्—वह क्यों योगिराज ?

शिवानन्द—कर्म फल केवल कर्त्ता ही पर नहीं अन्य कई तत्वों पर निर्भर होता है। अतएव जिस पर अपना अधिकार नहीं उस लालसा करना अनधिकार चेष्टा है।

सम्राट्—फिर कोई कर्म करेगा ही क्यों ?

शिवानन्द—कर्म तो प्रत्येक व्यक्ति को करना ही पड़ता है। एक क्षण भी उससे बच नहीं सकता। विमूढ़ व्यक्ति कर्मों का कर्त्ता अहंकार वश अपने को मानते हैं, वैष्णव सब कर्म ईश्वरार्पण बुद्धि से करता है। यही अन्तर है।

सम्राट्—ये बातें जन-समाज को बुद्धिगम्य कैसे कराई जायेंगी ?

शिवानन्द—जनसमाज भगवान विष्णु की उपासना और ध्यान द्वारा इस प्रकार का जीवन व्यतीत कर सकता है।

सम्राट्—विष्णु का ध्यान जनसमाज किस प्रकार कर सकेगा ?

शिवानन्द—धनी मानी व्यक्ति विष्णु की मूर्ति स्थापित करेंगे। मूर्तियाँ चतुर्भुजी होंगी। उन हाथों में शंख चक्र गदा और पद्म होंगे।

सम्राट्—इनका रहस्य क्या है योगिराज !

शिवानन्द—भगवान विष्णु सब देवताओं के राजा हैं। उनका चक्र दुष्ट शक्तियों को अप्रतिवार्य रूप से नाश करने की शक्ति का सूचक है !

सम्राट्—और शंख का क्या अभिप्राय ?

शिवानन्द—शंख युद्ध और विजय की घोषणा करता है।

सम्राट्—गदा का क्या अर्थ ?

शिवानन्द—शासन का दंड चिन्ह है।

सम्राट्—और पद्म ?

शिवानन्द—भक्त के लिए सम्पन्नता, आनन्द और वृद्धि का सूचक है।

सम्राट्—राज्य का क्या कर्तव्य क्या होगा योगिराज ?

शिवानन्द—राज्य को गीता-धर्म के प्रचार का प्रयास करना चाहिए, उपनिवेशों में इस धर्म का रहस्य समझाने के लिए योग्य व्यक्तियों को अपना जीवन समर्पण करना होगा।

यवद्वीप नरेश—योगिराज, भारत से दूर स्थित उपनिवेशों में इसके प्रचार का आयोजन कीजिए। भारत का कोई धर्मात्मा व्यक्ति उपनिवेशों में जाना चाहिए।

शिवानन्द—उचित है। [मालती की ओर देखते हुए] मालती!

मालती—योगिराज ?

शिवानन्द—वैष्णव धर्म का रहस्य समझाने के लिए क्या तुम राज वैभव छोड़कर उपनिवेशों में जा सकोगी ?

मालती—यदि सम्राट् की अनुमति हो योगिराज ?

शिवानन्द—क्यों सम्राट्! क्यों अनुमति देते हो ?

सम्राट्—धर्म सहचारिणी को धर्मार्थ जीवन अर्पण करने का पूर्ण अधिकार है योगिराज!

शिवानन्द—मालती, आज तुम्हारा जीवन पूर्ण हुआ! [राजन्यवर्ग की ओर देखकर] राजन्यवर्ग।

राजन्य वर्ग—योगिराज! आज्ञा!

शिवानन्द—आज भारत माता के ध्वस्त अवयव स्वस्थ हो गए। छोटे छोटे राजा मणिगण हैं, जिनको मिलाकर माता के गले में माला पहनाई जा रही है। प्रत्येक मणि की शोभा अलग अलग होती है, किन्तु सूत्र में ग्रंथित हो जाने पर माला की छबि के साथ प्रत्येक मणि की आभा कहीं अधिक रमणीय बन जाती है। इस माला को स्थायी बनाने के लिए प्रेम का का सूत्र बलिष्ठ होना चाहिए। उस सूत्र को बलिष्ठ बनाने का

एकमात्र उपाय है शुद्ध जीवन। जीवन शुद्ध बनाने के लिए भगवान विष्णु की आराधना अनिवार्य है। क्या आप लोगों को यह मान्य है।

राजन्यवर्ग—मान्य है योगिराज।

शिवानन्द—क्या आप लोग सम्राट् समुद्रगुप्त की सहायता करते रहेंगे ?

राजन्यवर्ग—अवश्य करेंगे सम्राट् ! [शिवानन्द बैठ जाते हैं]

समुद्रगुप्त—राजन्यवर्ग, जन समाज को सुखी बनाने और धर्म का रहस्य समझाने के लिए मुझसे आप क्या चाहते हैं ?

यवद्वीप नरेश—सम्राट्, हमारे देश की असभ्य जातियाँ कभी कभी विद्रोह करती हैं। हमें कुछ सैन्य-बल चाहिए। हम नरेशों की यही इच्छा है क्योंकि शस्त्रबल से रक्षित होने पर ही शास्त्र-चिन्तन हो सकता है।

[कल्याण वर्मा खड़ा होता है]

कल्याण वर्मा—सम्राट्, मुझे साम्राज्य-सेवा का अवसर दीजिए। मैं साम्राज्य के हित मर मिटूं यही मेरी अभिलाषा है।

[समुद्रगुप्त के चरणों पर गिरता है]

समुद्रगुप्त—धन्य हो वीर ! अपनी माता से आज्ञा मांग लो।

[अहिच्छत्र महिषी के पैरों पर कल्याण वर्मा गिरता है]

अहिच्छत्र महिषी—वत्स, आज मेरे हृदय ने तुम्हें क्षमा दी है। जाओ साम्राज्य की सेवा करके जीवन सार्थक बनाओ।

चन्द्रवर्मा—[समुद्रगुप्त के सम्मुख नतमस्तक होकर] सम्राट् !

सम्राट्—कहो वीर। क्या चाहते हो ?

चन्द्रवर्मा—भारत के पश्चिमोत्तर सीमान्त की रक्षा करते हुए जीवन बलिदान करने की अभिलाषा है। मुझे आज्ञा दीजिए सम्राट्!

सम्राट्—अपनी माता विद्या और धर्मपत्नी माधुरी से आज्ञा मांगो वीर!

चन्द्रवर्मा—[अपनी माता के चरणों पर गिरकर] मां!

विद्या—आज मेरा हृदय तुम्हारे प्रति शुद्ध हुआ वत्स! जाओ, तुमने मुझे माता कहकर पुकारा तो सही! तुम हो मेरे वत्स!

चन्द्रवर्मा—(माधुरी से) प्रिये, मुझे अनुमति दो। मैं भी अपना जीवन साम्राज्य के लिए लगा सकूं!

माधुरी—(आंखों में आंसू भरकर) नाथ!

शिवानन्द—सम्राट्, मालती और कल्याण वर्मा उपनिवेशों के मंगल कार्य में तल्लीन हो रहे हैं। चन्द्रवर्मा सीमान्त रक्षा का भार वहन करने जा रहे हैं। अब आपकी कोई अभिलाषा अपूर्ण तो नहीं रही?

सम्राट्—योगिराज, वृहत्तर भारत का मंगल तो इस प्रकार हो सकेगा, परन्तु हमारा भारतीय आदर्श विश्व कल्याण का है। हमारे लिए समस्त वसुधा कुटुम्ब है। अतएव विश्व-मंगल अपेक्षणीय है। वह किस प्रकार होगा?

शिवानन्द—सम्राट्, समस्त संसार उन्नतिशील राष्ट्र का अनुसरण करता है। भारत में संहार काल समाप्त हो गया। अत्याचारी दुष्टों का दमन हो चुका। अब सदाचारी सज्जनों का पालन करना है। अतएव पालनकर्त्ता विष्णु की उपासना से अपने देश की सुख समृद्धि के साथ २ विश्व में वैभव की

वृद्धि की जा सकती है। इस प्रकार भारत के साथ विश्व कल्याण हो जायगा।

[विष्णु भगवान को स्मरण करते हुए शिवानन्द का प्रस्थान]

कृष्ण चन्द्र नैराश्य भरी जग रजनी में सत्वर आओ।
मधुर बांसुरी स्वर लहरों में गीता गायन कर जाओ।
ज़ला जगत हो हरा भरा, घनश्याम सुधा अब बरसाओ।
सूख रहीं तरु लतिकाएं इनको वृन्दावन कर जाओ।

[अन्तिम पटाक्षेप]

नाटक में वर्णित ऐतिहासिक स्थानों का वर्तमान नाम

महाराज अच्युत का राज्य उत्तरी पांचाल में था। उनकी राजधानी अहिच्छत्र नगरी थी, जिसे आजकल रामनगर कहते हैं। यह स्थान संयुक्त प्रान्त के बरेली जिले में है। इसी स्थान से ऐसे सिक्के प्राप्त हुए हैं जिन पर 'अच्यु' उत्कीर्ण है।

कोशल—श्री·पुर—आजकल सिर पुर (मध्यप्रांत)—उस समय कोशल की राजधानी थी। यह राज्य विलास पुर, रायपुर और संबल पुर तथा गंजाम जिले के कुछ भाग में फैला था। कोशल नरेश का नाम महेन्द्र था।

महाकान्तार—कोशल के उपरान्त समुद्रगुप्त ने महाकान्तार पर आक्रमण किया। यह स्थान विन्ध्य पर्वत के मध्य है। पूर्वी गोंडवाना महाकांतार कहलाता था, और वहाँ का राजा व्याघ्र राज के नाम से पुकारा जाता था।

केरल—पूर्वी घाट में कोलेर झील, मध्यप्रांत का सोनपुर जिला केरल कहलाता था। इसकी राजधानी महानदी के तट पर ययाति नगरी थी।

पिष्टपुर—आजकल का पिठापुरम् पिष्टपुर कहलाता था। इसकी राजधानी गोदावरी जिले में थी। राजा का नाम महेन्द्र गिरि था।

कोट्टूर—आज का कोठूर कोट्टूर कहलाता था। यह स्थान गंजाम जिले में है।

कांची—आज का कांजी वरम कांची कहलाता था। यहाँ का राजा विष्णु गोप था। यह राजा पल्लव वंशी था।

वेंगी—वेंगी नरेश हस्ति वर्मन को समुद्र गुप्त ने हराया था। पल्लव नरेश विष्णु गोप और हस्तिवर्मन ने एक साथ समुद्रगुप्त से युद्ध किया।

देवराष्ट्र—यह राज्य विजयापट्टम जिले में था। यहाँ चालुक्यों का राज्य था।

अटविक—८० छोटे छोटे राज्य थे। ये राज्य जबलपुर के आस पास जंगली भागों में थे।

समतट—गंगा और ब्रह्मपुत्र के बीच का प्रदेश

कामरूप—आसाम

कर्तृपुर—कमायूँ, अल्मोड़ा, गढ़वाल और मिलकर एक राज्य था। उसकी राजधानी कर्तृपुर थी।

मद्रक—राजधानी शाकल (स्यालकोट) पंजाब में थी।

मूलस्थान पुर—उसे आजकल मुल्तान कहते हैं।

गोमती विहार—यह बौद्ध विहार खोतान के पास था। फाह्यान ने इसका विस्तृत वर्णन किया है। यहाँ पर २००० भिक्षु रहा करते थे।

विदेशी राज्य

देवपुत्र शाही शहानुशाही—कुशान वंशी राजाओं की उपाधियाँ थी इस राज्य के छोटे छोटे टुकड़े हो गए थे। इन राजाओं का राज्य पश्चिमी पंजाब से ओक्सस नदी तक था।

शक मुरंड—उज्जैन के महाक्षत्रप थे।

ऐतिहासिक राजाओं के विषय में

नागसेन—चम्पावती (मारवाड़ के समीप) और मथुरा का राजा था। बाण ने हर्ष चरित में भी इसका वर्णन किया है।

रुद्रदेव—वाकाटक नरेश का नाम था रुद्रदेव प्रथम। इनका राज्य बुन्देल खण्ड में था। इनका राज्य जमुना नदी के दक्षिण से लेकर विन्ध्य प्रदेश तक था। पृथ्वीसेन के शिला लेखों से यह बात प्रमाणित हुई है।

आटविक नरेश—समुद्रगुप्त की प्रशस्तियों से ज्ञात होता है कि उसने आटविक नरेशों को (परिचारकी कृता) सेवक बना लिया था।

नौ गणराज्य

मालव—अवन्ति देश में मालवों का राज्य था। इनके सिक्कों पर "जय मालवा गणस्य" मिलता है। इनका राज्य जैपुर राज्य के दक्षिण कोटा झालावाड़ प्रदेशों पर था। उस समय ये लोग मन्दसोर के आस पास बसे थे।

अर्जुनायन—इनका राज्य मथुरा से पश्चिम भरतपुर और अलवर राज्यों पर था!

यौधेय—इनकी उपाधि थी "महाराज महासेनापति"। पंजाब बहावल पुर रियासत में रहने वाली योहिया नामक जाति उनकी वंशज मानी जाती है। इनके सिक्कों पर "ब्रह्मराय देवस्य भागवतः" लिखा मिलता है।

★

टिप्पणियां

(१) योधेय—एक राजवंश।

उत्कीर्ण—खुदा हुआ।

महाराज महा सेनापति—स्वयं महाराज ही महा सेनापति का काम करने वाला।

गुल्म—सेना का एक भाग।

महा सेनापति—सेना का सबसे बड़ा अधिकारी। इन्हें महा बलाधिकृत भी कहते थे।

(२) भांडागारिक—सेना के भोजनादि की व्यवस्था करने वाला। युद्ध-सामग्री का कोषाध्यक्ष।

वलाध्यक्ष—सैनिकों की भरती करने वाला सबसे बड़ा अधिकारी

कटुक—हाथियों की सेना का सेनानायक।

(३) क्षत्रप तथा महाक्षत्रप—शक राजाओं की उपाधि।

व्रात्य—बौद्ध धर्म के मानने वाले।

अक्षम्य—जो क्षमा के योग्य न हो।

(४) सन्धि विग्रहिक—(शुद्ध पाठ हैं महासन्धि विग्रहिक) राज्य की अन्तर्राष्ट्रिय नीति का निर्धारण करने वाला।

(५) नाराच—एक अस्त्र।

(७) चषकों—प्यालों।

(८) आयास—परिश्रम।

तोमर सन्धान—तोमर अस्त्र का प्रयोग।

(६) ताँडव नृत्य—शिव का रोष भरा हुआ नृत्य।

(११) प्रतिद्वन्द्वी—विरोधी।

उदात्त—ऊंची भावना रखने वाला।

'न खरो नच भूयसा मृदुः'—समुद्रगुप्त जिस नीति का पालन करता था, अर्थात् राजनीति में न कठोर बनता था और न अत्यधिक कोमल।

(११) उपधान—क्रिया।

दण्ड पाशाधिकरण—पुलिस विभाग का सबसे बड़ा अधिकारी।

दण्डपाशिक—साधारण सिपाही को कहते थे।

विनय स्थिति स्थापक—धर्म विभाग का सबसे बड़ा अधिकारी!

प्रतिहार—महाप्रतिहार—विनयशूर—राजप्रासाद में संदेश लाने और ले जाने का काम करने वाले।

(१४) वाकाटक—मध्य भारत में राज्य करने वाला एक वंश।

महाकान्तार—एक राज्य का नाम।

महादण्डपाशिक—पुलिस विभाग का सबसे बड़ा अफसर।

(१५) दुरभिसन्धि—गुप्त राजनीति।

(१७) शा.शिव—एक ब्राह्मण वंश जो तपस्वियों के समान जीवन बिताता हुआ राज्य करता था।

(१८) अलिन्द—बरामदा।

स्थविर—बौद्ध विहार।

(१६) पुष्यमित्र—नाम विशेष।

(२१) चत्वाल—ऊंचा चबूतरा।

कूर्म-वाहिनी—सेना जिसने कूर्म के समान व्यूह बना लिया हो।

विल्व—बेल का वृक्ष।

अन्तरीय—प्राचीन काल में कमर में जो वस्त्र धारण किया जाता था।

उत्तरीय—चादरा जो ऊपर ओढ़ा जाता था।

(२३) स्वल्प—बहुत थोड़ा।

(२४) अघाता—सन्तुष्ट होना!

(२६) प्रतारित—धोखा खाया हुआ।

(२७) पूप—इसे आज कल पूआ कहते है। एक प्रकार का मिष्ठान्न।

मोदक—लड्डू।

गोपनीय—छिपाने योग्य।

(२८) अनर्गल—व्यर्थ।

(३०) कौपीन—लंगोटी।

(३१) कदंब—एक वृक्ष का नाम।

(३२) प्रमाद—आलस्य।

(३३) दुःखम्, समुदय, निरोध, निरोधगामिनीप्रतिपद्—

दुख का कारण समुदय कहलाता है।

दुख के कारणों को रोकना निरोध कहलाता है।

जिस मार्ग पर चल कर दुख के कारणों का निरोध हो सकता है, उसे निरोध गामिनी प्रतिपद् कहते हैं।

(३६) गरल—विष।

सदय—दया सहित।

(४२) नीराजना—आरती।

सार्थवाह—बड़ा व्यापारी।

लाजक—खील।

(४८) अमर्ष—क्रोध।

(५२) महायान—बौद्ध धर्म का एक सम्प्रदाय।

(५२) अबाध—जिसे कोई न रोक सके।

(११४) शाहानुशाही—कुशान जाति के शासकों की उपाधि।

(१५५) अप्रतिवार्यरूप—जिसको कोई न रोक सके।

कतिपय उपाधियाँ

कुमारामात्याधिकरण—कुमार का प्रधान मन्त्री।

बलाधिकरण—सेना का प्रधान सचिव।

भांडा गारिक—युद्ध सामग्री का कोषाध्यक्ष।

विषय पति—जिले का शासक।

उपरिक महाराज—प्रान्त का शासक।

अग्रहारिक—दानाध्यक्ष।

परमेश्वर परम भट्टारक महाराजाधिराज—महाराज की उपाधि।

★

